प्रौढ़ शिक्षा

जनवरी – मार्च 2016
वर्ष 60 अंक–1

सम्पादक मण्डल

प्रो. भवानीशंकर गर्ग
(सरंक्षक)

श्री मृणाल पंत
श्री ए.एच.खान
डा. सरोज गर्ग
श्री दुर्लभ चेतिया
डा. डी.के.वर्मा
डा. उषा राय
डा. मदन सिंह
श्री एस.सी. खंडेलवाल
श्री राजेन्द्र जोशी

सम्पादक
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

इस अंक में

सम्पादकीय

ग्रामीण महिला सशक्तीकरण में शिक्षण संस्थाओं की भूमिका
–दीपेश कुमार भट्ट 5

साक्षरता शिक्षा और मानव संसाधन विकास
–अल्का पाण्डेय
–एस.एस. रावत 10

उत्तराखण्ड में लैंगिक असमानता – एक विश्लेषण
– रेनू गौतम 16

पंचायती राज 30

भगवद्गीता में लोकसंग्रह का अर्थ एवं वर्तमान युग में उसकी उपयोगिता
–पुष्पा तिवारी 34

लाचारी 37

मूल्यः रूपये 200/–वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं, जिनके लिए संघ एवं सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है ।

Census 2011 - Database for Literacy Programmes

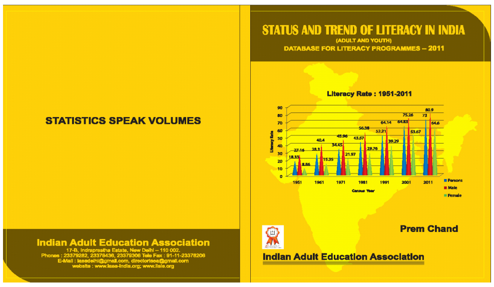

Indian Adult Education Association has brought out recently a book titled **Status and Trend of Literacy in India (Adult and Youth) Database for Literacy Programmes – 2011**. This book has 200 pages with 8 chapters and 17 tables. Annexure also gives district-wise information regarding literates, illiterates and literacy rates by sex and rural/urban areas for the age group 7 and above and illiterates, literates and literacy rates by sex and areas for adolescent (10-19) and youth (15-24) population – 2011.

The price of the book is Rs.800/- (US $ 90) per copy. Purchase order can be made by mail (directoriaea@gmail.com) indicating number of copies required and Demand Draft for total amount sent by post. The Demand Draft be drawn in favour of “Indian Adult Education Association” payable at New Delhi.

सम्पादकीय

भारत : ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट 2015 के आलोक में

दिनांक 14 दिसंबर 2015 को यूनाइटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम द्वारा वर्ष 2015 का ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट जारी किया गया। विकास के अन्य महत्वपूर्ण पक्षों के साथ इस बार के रिपोर्ट में मुख्य ध्यान 'कार्य और विकास के अंतर्संबंधों' पर केन्द्रित किया गया है। यूएनडीपी ने 'कार्य' को 'रोजगार' की प्रचलित अवधारणा से अलग हटकर देखने की कोशिश की है। रिपोर्ट के निदेशक सेलिंम जहान के अनुसार रोजगार की अवधारणा कई मायनों में संकीर्ण साबित होती है। यह अवधारणा 'इनपुट' और 'आउटपुट' की संरचना के तहत कार्य करती है, जिसमें मानवीय श्रम एक इनपुट तथा उत्पाद या सेवा आउटपुट के रूप में गिना जाता है। सेवा कार्य, स्वयंसेवी प्रयास तथा रचनात्मक अथवा सृजनात्मक कार्य इसके अंतर्गत शामिल नहीं माने जाते हैं। जबकि 'कार्य' की अवधारणा अत्यंत व्यापक है। रोजगार के साथ–साथ इसमें सभी प्रकार के सेवा कार्य, स्वयंसेवी प्रयास तथा सृजनात्मक कार्य सम्मिलित होते हैं। रिपोर्ट में तथ्यात्मक धरातल पर जाकर इस बात को प्रमाणित करने की कोशिश की गयी है कि यद्यपि कार्य और मानवीय विकास के बीच में सीधा–सीधा संबंध नहीं है बावजूद इसके विश्व के मौजूदा आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक संरचना में कार्य मानव के विकास में केन्द्रीय भूमिका का निर्वहन करती है। फिर कार्य चाहे रोजगार अथवा उससे हटकर सेवा कार्य, स्वयंसेवी प्रयास और सृजनात्मक कार्य हीं क्यों न हो?

रिपोर्ट कहती है कि विश्व की वर्तमान जनसंख्या तकरीबन 7.3 बिलियन अर्थात 730 करोड़ है, जिसमें से 3.2 बिलियन अर्थात् 320 करोड़ लोग आज रोजगार प्राप्त हैं तथा शेष शीघ्र ही इस श्रेणी में शामिल होने के लिए प्रयत्नशील हैं।

रिपोर्ट के अनुसार विगत 25 वर्षों के अन्तराल में विश्व के सभी हिस्सों एवं समुदायों की वास्तविक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आया है और तकरीबन 2 बिलियन अर्थात 200 करोड़ लोग निम्न मानवीय विकास की सीमा को लांघकर मध्यम अथवा उच्च मानवीय विकास वाली श्रेणी में सम्मिलित हुए हैं। सन् 2015 में जारी वर्तमान ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट में 0.550 सूचकांक से नीचे वाले देशों को निम्न विकास, 0.550 से 0.699 तक को मध्यम विकास, 0.700 से 0.799 को उच्च विकास तथा 0.800 और इससे ऊपर सूचकांक वाले देशों को अति उच्च मानवीय विकास वाले श्रेणी में रखा गया है। 0.609 की सूचकांक के साथ भारत मानवीय विकास की श्रृखला में 130वें स्थान पर है। सन् 2014 में यह 135वें स्थान पर था। सार्क के अंतर्गत शामिल 8 देशों में 0.757 सूचकांक के साथ श्रीलंका, जिसका विश्व में 73वां स्थान है, सबसे उपर है। इसके बाद मालदीव (0.706 सूचकांक) का स्थान आता है, जिसका विश्व में

104वां स्थान है । भूटान (0.605 सूचकांक), बंगलादेश (0.570 सूचकांक), नेपाल (0.548 सूचकांक), पाकिस्तान (0.538 सूचकांक) तथा अफगानिस्तान (0.465 सूचकांक) की स्थिति भारत के बाद आती है और विश्व में इनका स्थान क्रमशः 132, 142, 145, 147 तथा 171वां है।

रिपोर्ट के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि 25 वर्ष पहले जहां विश्व में 3 बिलियन की आबादी के साथ 62 देश निम्न मानवीय विकास की श्रेणी में थे अब केवल एक बिलियन से कुछ ज्यादा आबादी के साथ केवल 43 देश इस श्रेणी में हैं। वहीं मध्यम एवं उच्च मानवीय विकास की श्रेणी में शामिल होने वाले देशों एवं लोगों की संख्या भी बहुत बड़ी है। सन् 1990 में 1.2 बिलियन आबादी के साथ 47 देश इस श्रेणी के अंतर्गत आते थे अब 3.6 बिलियन की आबादी के साथ 84 देश इस श्रेणी में आते हैं।

इस रिपोर्ट में मानव विकास सूचकांक के साथ–साथ लैंगिक विकास सूचकांक, शैक्षिणक उपलब्धि, जीवन जीने के स्तर के प्रति सन्तुष्टि आदि का भी विश्लेषण किया गया है। लैंगिक विकास के तहत विश्व के सभी देशों को पांच अलग वर्गों में विभाजित किया गया है। महिला और पुरुष के विकास दर में दस प्रतिशत से ज्यादा फासले वाले देशों को पांचवें समूह के अन्तर्गत माना गया है। यह चिंताजनक है कि 0.795 लैंगिक विकास सूचकांक के साथ भारत आज भी इस पाचवें समूह में आता है, जबकि सार्क देशों के अन्दर श्रीलंका और मालदीव तीसरे वर्ग में तथा बंगलादेश एवं नेपाल चौथें वर्ग में आते है। लैंगिक विकास की दृष्टि से इनकी स्थिति भारत से कहीं बेहतर है। मालदीव, भूटान तथा नेपाल अपने सकल घरेलू उत्पाद का क्रमशः 6.2, 5.5 तथा 4.7 प्रतिशत रकम शिक्षा पर व्यय करते है,जबकि भारत अपने सकल घरेलू उत्पाद का महज 3.8 प्रतिशत ही शिक्षा पर व्यय करता है।

इस रिपोर्ट के अनुसार भारत में शिक्षा की गुणवत्ता से संतुष्ट लोगों की संख्या 69 प्रतिशत, स्वास्थ्य सेवाओं से संतुष्ट लोगों की संख्या 58 प्रतिशत, जीवन स्तर से संतुष्ट लोगों की संख्या 58 प्रतिशत तथा यहां जीवनयापन को सुरक्षित मानने वालों की संख्या मात्र 52 प्रतिशत है। यहां 75 प्रतिशत महिलाओं तथा 79 प्रतिशत पुरुषों का मानना है कि उन्हें चयन की स्वतंत्रता है। स्पष्ट है कि विगत दशकों में देश ने अपने नागरिकों की प्रगति के लिए भरसक प्रयत्न किया है और इसके कारण कई मायनों में उनकी प्रगति भी हुई है पर चुनौतियों का आकार अभी भी विशाल एवं व्यापक है जिनके निराकरण के लिए सरकार ही नहीं बल्कि स्वयंसेवी प्रयासों के साथ नागरिकों को भी अपने स्तर पर सक्रिय भूमिका का निर्वहन करना होगा।

– **बी. संजय**

ग्रामीण महिला सशक्तीकरण में शिक्षण संस्थाओं की भूमिका

दीपेश कुमार भट्ट

किसी भी राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की महत्वपूर्ण एवं प्रभावी भूमिका होती है। राष्ट्र की भावी होनहार पीढ़ी का प्रारंभिक सरोकार महिलाओं से ही होता है। स्वाभाविक है कि इनका बेहतर निर्माण भी महिलाओं के हाथों ही हो सकता है। सदियों से हमारे देश ने महिलाओं की महत्ता को स्वीकारा है, उनको गरिमा प्रदान की है और उन्हें हर दृष्टि से पूज्य माना है। ''यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता'' के मंत्र उद्‌घोष के साथ ही हमारे सभी धर्मशास्त्र यह मानते हैं कि समाज में सर्वोपरी स्थान महिलाओं का ही है। आधुनिक शिक्षा और विकास के दौर में हर राष्ट्र स्वयं को एक शिक्षित राष्ट्र के रुप में विकसित करना चाहता है और यह नारी के महत्वपूर्ण और अनिवार्य योगदान के वगैर संभव नहीं है। पर हमारे युग की यह घोर विड़म्बना है कि राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में अपनी इस महत्वपूर्ण भूमिका को जानते हुए भी महिलाएं भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त तमाम आर्थिक और सामाजिक अधिकारों का पूर्ण उपयोग कर अपने मौलिक स्थिति में अपेक्षित बदलाव नहीं ला पा रही हैं। इसका मुख्य और आधारभूत कारण महिलाओं का अशिक्षित अथवा पर्याप्त शिक्षित नहीं होना है।

भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गावों में निवास करती है। इस विशाल आबादी के विकास को भगवान भरोसे छोड़कर राष्ट्र का समुचित विकास सुनिश्चित नहीं किया जा सकता और इसीलिए विगत कई दशकों से केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने इस ओर विशेष ध्यान देना प्रारम्भ किया है परिणामस्वरुप आज ग्रामीण क्षेत्रों में भी तीव्र गति से आर्थिक विकास हो रहा है। परन्तु यदि हम इस क्षेत्र की महिला शिक्षा की ओर ध्यान दें, तो स्थिति कुछ और ही नजर आती है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है और आज भी यहां की अधिकांश महिलाएं अशिक्षित हैं। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा की विशेष जरूरत महसूस की जाती है।

भारत में प्राथमिक शिक्षा की एक रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में पहली कक्षा में प्रवेश लेने वाली हर सौ लडकियों में से सिर्फ 40 पॅाचवीं तक, 18 लडकियां आठवीं तक, 9 लडकियां नौवीं तक तथा सिर्फ एक लड़की बारहवीं कक्षा तक पहुच पाती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत सी बालिकाएं प्राथमिक स्तर पर ही पढ़ाई छोड़ देती हैं। इतना ही नहीं कई परिवारों में तो बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा से वंचित भी रखा जाता है। यह

स्थिति अनुसूचित जनजाति और अनुसूचित जातियों में ज्यादा देखने को मिलती है। इसके मुख्य कारणों में माता – पिता का अशिक्षित होना, विद्यालय का आवासीय इलाकों से दूर होना, छोटी उम्र में शादी होना तथा लैंगिक विभिन्नता का होना आदि शामिल हैं।

बात यहीं नहीं समाप्त हो जाती है। हमारे देश में जहां एक ओर लडकियों को देवी का रूप मानकर घरों और मंदिरों में उनकी पूजा की जाती है, वहीं दूसरी ओर उन्हें मानसिक और शारीरिक रुप से प्रताड़ित करने की घटनाएं भी लगभग रोजाना समाचार पत्रों में छपती हैं। देश के सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश तथा मूल्य प्रणाली में भी हर कदम पर लैंगिक असमानताएं देखने को मिलती हैं। समाज में लड़की को हर समय बोझ समझा जाता है और लडकों को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। अक्सर समाज में बालिका की भूमिका विवाह और मातृत्व तक सीमित कर दी जाती है। उसे छोटी उम्र में ही अपने से छोटे भाई – बहनों के पालन – पोषण की जिम्मेदारी सौप दी जाती है। कम उम्र में शादी कर दिए जाने के कारण वह आजीवन कुपोषण और बीमारियों का शिकार बनी रहती है।

यह दुर्भाग्य है कि हमारे देश में जब भी महिला सशक्तीकरण की बात की जाती है, वह सिर्फ राजनीतिक और आर्थिक सशक्तीकरण की सीमाओं में सिमटकर रह जाती है। महिला के सम्पूर्ण सशक्तीकरण की बात नहीं होती है। यहां महिलाओं को सिर्फ पुरूषों से हीं नहीं बल्कि जातीय संरचना के मद्देनजर भी पीछे धकेला गया है। सच तो यह है कि परिवार की सभी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में अपना जीवन समर्पित करने वाली महिलाओं की क्षमताओं का आज तक सही मायने में आकलन ही नहीं हो पाया है। यह एक बड़ी चुनौती है क्योंकि समाज अपनी सम्पूर्णता को तब तक नहीं पा सकता जब तक कि दुनियां की आधी आबादी को उसके अधिकारों, आजादी और सम्मान से वंचित रखा जाता है। महिलाओं के सम्पूर्ण सशक्तीकरण का लक्ष्य भी तब तक अधूरा माना जाऐगा जब तक की उनका सामाजिक सशक्तीकरण नहीं होता। सवाल यह है कि सामाजिक सशक्तीकरण का जरिया क्या हो़गा ? इसका सीधा सा उत्तर है – शिक्षा। वास्तव में शिक्षा सामाजिक सशक्तीकरण का पर्याय है। इस प्रकार सामाजिक सशक्तीकरण कैसे होगा इसका जवाब तो सरल है, परन्तु इसे प्राप्त करने का लक्ष्य अत्यंत कठिन।

देश को गुलामी की जंजीरों से स्वतन्त्र हुए करीब 68 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं और इस पूरे कालखण्ड़ में हम निरन्तर विकास की ओर अग्रसारित हैं। फिर भी हम महिला साक्षारता की दृष्टि से दुनियां के मानचित्र पर पिछड़े हुए दिखते हैं। यदि ग्रामीण महिलाओं की बात करें, तो इसमें हम कहीं अधिक पिछड़े हुए हैं जैसा कि नीचे दी गयी सारणी से स्पष्ट है –

सन्	ग्रामीण महिला साक्षरता	शहरी महिला साक्षरता	कुल साक्षरता
1961	10.10	40.50	15.25
1971	15.50	48.80	21.97
1981	21.70	56.30	29.76
1991	30.62	64.05	39.29
2001	46.58	72.99	54.16
2011	58.75	79.92	65.46

स्त्रोत : भारत जनगणना 2011

उपर्युक्त सारणी से ज्ञात होता है कि जहां भारत की ग्रामीण महिला साक्षरता सन् 1961 में 10.10 प्रतिशत थी, वहीं 2011 में यह बढ़कर 58.75 प्रतिशत हो गई। लेकिन यदि ग्रामीण और शहरी साक्षरता की तुलना करें तो पता चलता है कि इसमें 21.17 प्रतिशत का अन्तर है। स्पष्ट है कि हम आज भी ग्रामीण साक्षरता की दृष्टि से बहुत अधिक पिछडे हुए हैं। यदि सन् 1961 और सन् 2011 के बीच महिला साक्षरता दरों पर गौर करें तो पता चलता है कि 50 वर्षों के इस अन्तराल में ग्रामीण महिला साक्षरता दर में 48.65 प्रतिशत तथा शहरी महिला साक्षरता दर में 39.42 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है, जबकि देश के औसत साक्षरता दर में 50. 21 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है। इस प्रकार यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि देश की साक्षरता में हुई औसत वृद्धि की तुलना में महिला साक्षरता में हुई वृद्धि कहीं कम है।

सवाल उठता है कि आखिर वे कौन से कारण थे, जिनके कारण स्वाधीनता के बाद विगत 68 सालों में महिला साक्षरता दर में आशा जनक परिणाम प्राप्त नहीं हो सके। तथ्य तथा विगत वर्षो के सरकारी एवं स्वैच्छिक अनुभव इसके लिए निम्नलिखित कारकों के तरफ इशारा करते हैं :

ग्रामीण महिला सशक्तीकरण में बाधक कारक :

- महिलाओ में जागरूकता का अभाव
- असाक्षरता
- पितृसत्तात्मक समाज
- कमजोर आर्थिक स्थिति
- विद्यालय की कस्बों और गांवों से दूरी
- विद्यालयी पाठ्यक्रम में दोष
- बाल–विवाह
- सामाजिक जागरूकता की कमी
- औपचारिक सरकारी प्रयास

ऐसा नहीं है कि सरकार ने इन समस्याओं के निराकरण का प्रयास नहीं किया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की पृथक रूप से स्थापना की है ताकि महिला सशक्तीकरण और बालकों के समुचित विकास पर ध्यान केन्द्रित किया जा सके। इसके साथ ही साथ देश में उदारीकरण का दौर शुरू होने के कारण भी महिलाओं की स्थिति में तेजी से परिवर्तन हुआ है। देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के फैलाव ने बड़ी संख्या में युवाओं को रोजगार दिया जिनमें महिलाओं की संख्या भी उल्लेखनीय रही। नए प्रौद्योगिकी और शिक्षा के प्रसार ने महिलाओं के प्रति. समाज की सोच में बदलाव लाना शुरू किया और धीरे–धीरे हर क्षेत्र में महिलाओं के लिए द्वार खुलने लगे जिसके कारण सामाजिक स्थिति के साथ–साथ उनकी आर्थिक स्थितिं भी मजबूत हुई है।

भारत सरकार की ओर से ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए वर्तमान में कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं जिनमें स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार मिशन, राजीव गांधी किशोरी सशक्तीकरण योजना, जननी सुरक्षा योजना, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना आदि प्रमुख हैं। इसके अलावा महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए सरकार ने वर्ष 1990 में एक बड़ा कदम उठाया जो था राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना करना था। यह आयोग महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा और उन्हें अपनी भूमिका के प्रति जागरूक करती है। संयुक्त राष्ट्र ने भी ग्रामीण महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए वर्ष 2008 में 15 अक्टूबर को 'अंतर्राष्ट्रीय ग्रामीण महिला दिवस' के रुप में मनाये जाने की शुरुआत की।

इसके अलावा भारत सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए गैर सरकारी संगठनों को विभिन्न योजनाओं के द्वारा पार्याप्त वित्त व्यवस्था के साथ–साथ अनेकों प्रकार से मदद प्रदान कर रही है ताकि ये संगठन महिला लाभार्थियों को रोजगार प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बना सकें। पर सरकार के इस प्रयास का असर शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंकिंग, संचार, उद्योग, कानून और प्रषासनिक क्षेत्रों में विकास के रूप में शहरी क्षेत्रों में कहीं ज्यादा दिखायी दे रहा है।

ग्रामीण महिला सशक्तीकरण हेतु शिक्षण संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले प्रयासः

यदि वास्तव में ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सुधारनी है तथा उन्हें शिक्षित करना है तो हमें सरकारी प्रयासों के साथ–साथ सामाजिक जागरूकता भी लानी होगी। समाज को नारी शिक्षा में वृद्धि के लिए अथक प्रयास करने होंगे। समाज द्वारा ग्रामीण महिला सशक्तीकरण के लिए निम्नलिखित तिविधियां अथवा कार्यक्रम संचालित करना इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकता है :

- बाल विवाह रोकने के लिए समाज में सक्रिय रहना ।
- सरकारी प्रयासों का प्रचार–प्रसार।
- जन–जागरूकता रैली व नुक्कड़ नाटक का आयोजन।
- पाठ्यक्रम को व्यवसाय के साथ जोड़ना।
- कक्षा 10 के बाद से ही व्यावसायिक पाठ्यक्रम लागू करना।
- गांवों अथवा कस्बों में रोजगार सूचनाएं प्रदान करना।
- स्वयंसेवी संस्थाओं तथा विद्यालय के मध्य शैक्षिक क्रियाओं का आदान–प्रदान करना।
- जन–संचार के साधनों द्वारा महिला जागरूकता हेतु प्रचार–प्रसार करना।
- शहरों की तर्ज पर गावों में भी ग्रीष्मावकाश के दौरान मीडिया के सहयोग से हॉवी (पसंदीदा रचनात्मक कार्यक्रम) क्लासेज आयोजित करना।
- महिलाओं को आत्म रक्षा के लिए प्रशिक्षण प्रदान करना।
- विद्यालय से समाज को जोड़ना तथा
- ग्रामीण महिलाओं को समय – समय पर रोजगार की जानकारी प्रदान करना।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि आज ग्रामीण महिलाएं सीढ़ी–दर सीढ़ी प्रगति की राह पर अग्रसरित हैं, लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं कि महिलाओं के खिलाफ अपराध समाप्त हो गए हैं। कन्या भ्रूणहत्या, महिलाओं के प्रति यौन हिंसा और दहेज उत्पीड़न जैसी बुराइयां समाज में आज भी कायम हैं। ग्रामीण महिलाओं का सही मायने में सशक्तीकरण के लिए अभी और सार्थक प्रयास करने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा लगातार प्रयास किये जाने के बाद भी अभी तक ग्रामीण महिला सशक्तीकरण नहीं हो पाया है। आखिर क्यों ? शायद इसलिए कि सरकार का ध्यान ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की तरफ जिस पैमाने पर जाना चाहिए था वह गया हीं नहीं है। हालांकि सरकार ने ग्रामीण विकास हेतु मनरेगा जैसी कई योजनाए लागू की हैं, जो सराहनीय हैं। परन्तु इसका लाभ वहीं उठा सकता है, जो शिक्षित हो। इससे शिक्षित महिला ही अपने अधिकारों के बारे में जान सकेगी।

यदि हमें वास्तव में राष्ट्र का विकास करना है तो हमें महिला साक्षरता दर बढ़ानी होगी। महिलाओं को शिक्षित करना होगा। उन्हें इस प्रकार से प्रशिक्षित करना होगा कि वे अपने आकिारों तथा उनकी सुरक्षा के लिए भारतीय संविधान में दिए गए कानून को अच्छी तरह जान सकें तथा उनका समुचित उपयोग भी कर सकें।

> ''मानवाधिकारों तथा कानून के शासन के प्रति यथोचित सम्मान के बिना कोई भी समाज लम्बे समय तक सम्पन्न अथवा सुरक्षित नहीं रह सकता है।''
>
> – संयुक्त राष्ट्र के पूर्व महासचिव कोफी अन्नान

साक्षरता शिक्षा और मानव संसाधन विकास

–अलका पाण्डेय
–एस.एस. रावत

किसी भी देश का विकास मात्र कल–कारखानों, बांधों, सड़कों व पुलों के निर्माण से ही नहीं होता है। देश का वास्तविक और सतत् विकास तो उसके मानव संसाधन की गुणवत्ता और स्तर में सतत् विकास अथवा उसके कुशल नागरिकों की संख्या में बढ़ोतरी से होता है। कुशल मानव संसाधन और समर्थ मानव शक्ति के निर्माण के लिये शिक्षा ही एकमात्र और जरूरी माध्यम है, और शिक्षा प्राप्ति का प्रथम पायदान है 'साक्षरता'।

साक्षरता' रूपी पगडंडी को सफलतापूर्वक पार कर, व्यक्ति 'शिक्षा' के मुख्यमार्ग से जुड़ता है। जब हम 'साक्षरता' की बात करते हैं तो उससे तात्पर्य 'कार्यात्मक साक्षरता' से होता है, अर्थात ऐसी साक्षरता जो दैनिक जीवन की गतिविधियों और परिवेश से जुड़ी हों और जीवन में उपयोगी बन सकें। 'साक्षरता' से तात्पर्य व्यक्ति को इस योग्य बना देना है जिससे वह न केवल जीविकोपार्जन कर सके वरन् सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से भी वह विचारशील, परिपक्व और आत्मनिर्भर बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सके। उसमें किसी प्रकार की मानसिक संकीर्णता, कट्टरता, रूढ़िवादिता, नकारात्मक भावना आदि के लिए कोई स्थान न हो। वह स्वयं में सत्य–असत्य, न्याय संगत–असंगत, तथ्य–अतथ्य में भली प्रकार अन्तर करने की क्षमता जागृत कर सके। वह किसी के बहकावे में न आये और स्वयं के 'अर्जित ज्ञान' के बलबूते पर तर्क–बुद्धि से उचित निर्णय कर सके। साक्षरता व्यक्ति में सूचना, ज्ञान, कौशल और सामर्थ्य को बढ़ाने वाली प्रक्रिया है। अतः विद्यालयीय शिक्षा से वंचित असाक्षर समुदाय के लिये साक्षरता के अभाव में शिक्षा प्राप्ति की कल्पना करना निराधार है।

यद्यपि असाक्षर समुदाय के पास पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित परम्परागत ज्ञान और अनुभवों की अमूल्य धरोहर होती है, किन्तु नये जीवन मूल्यों, वैज्ञानिक सोच और नई जीवन शैली के चलते इनमें से कई बातें अप्रासंगिक और अनुपयोगी हो जाती हैं। किसी भी कार्य के प्रति सोचने – समझने की जितनी क्षमता एवं उसके अनुरूप जीवन को परिवर्तित करने की शक्ति और सामर्थ्य मनुष्य व उसके समाज में उपलब्ध है, वह अन्य किसी चेतन–अचेतन समाज में नहीं है। प्राणियों में श्रेष्ठ और बुद्धि व विवेक के आधार पर असाधारण कार्यों को करने की सूझ–बूझ और व्यापक दृष्टि मनुष्य को शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त हुई है। इसलिए ज्ञान को 'सदगुणों के विकास' का और शिक्षा को 'सशक्तीकरण' का सर्वाधिक सशक्त माध्यम माना जाता है। शिक्षा और ज्ञान की इसी शक्ति और प्रभाव के आधार पर आज

ज्ञानवान समाज (नॉलेज – सोसायटी) की अवधारणा सामने आई है। आधुनिक युग में तृणमूल स्तर से वैश्विक स्तर की चुनौतियों के समक्ष 'ज्ञानवान–समुदाय' ही टिक पायेगा। इसलिये साक्षरता, शिक्षा और प्रशिक्षण द्वारा मानव संसाधन विकास प्रत्येक राष्ट्र की घोषित प्राथमिकता बन चुकी है।

शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों के स्वाभाविक और सामन्जस्यपूर्ण विकास में योगदान देती है। यह उसकी वैयक्तिकता का विकास करती है तथा उसे अपने वातावरण से सामन्जस्य स्थापित करने में सहायता देती है। शिक्षा व्यक्ति का नित्य जीवनचर्या तथा नागरिकता के कर्तव्यों और दायित्वों के निर्वहन के लिए तैयार करती है और उसके व्यवहार, विचार, दृष्टिकोण में श्रेष्ठकर रूपान्तरण करती है जो समाज, देश और विश्व के लिए हितकर होता है। अतः 'साक्षरता' शिक्षा प्राप्ति के लिए योग्यता और सम्भावनाओं को बढ़ाकर सामाजिक दृष्टि से उपयोगी मानव संसाधन तैयार करने हेतु उपयुक्त दशायें निर्मित करने में योगदान करती है। साक्षरता कार्यक्रम के अर्न्तगत मूल साक्षरता और उत्तर साक्षरता में आत्मनिर्भरता के उपरान्त ही सतत् शिक्षा के द्वारा आगे की शिक्षा प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। कार्यात्मक साक्षरता कार्यक्रम का उद्देश्य लोगों को मात्र उनके दैनिक जीवन में आने वाली लिखित बातों से निपटने की क्षमता प्रदान करना ही नहीं है, अपितु अपने विवेक से अधिक स्वतन्त्रता बरतने का सामर्थ्य प्रदान करना, अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा में वृद्धि करना और ज्ञान अर्जन के अन्य साधन प्राप्त करने की समझ विकसित करना भी है।

नागरिकों के विकास में साक्षरता के महत्व को समझते हुए ही भारत में पिछले तीन दशकों में व्यापक स्तर पर साक्षरता कार्यक्रम संचालित किए गए जिनमें राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, कार्यात्मक साक्षरता जन अभियान, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन और साक्षर भारत अभियान प्रमुख हैं। सन् 2011 के जनगणना से प्राप्त आंकड़े बताते हैं कि इन कार्यक्रमों के सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त हुए। सन् 2001 में देश की साक्षरता दर 64.8 प्रतिशत थी जो सन् 2011 में बढ़कर 73.0 प्रतिशत हो गई इसमें पुरूष साक्षरता दर 80.9 प्रतिशत एवं स्त्री साक्षरता दर 64.6 प्रतिशत थी। सन् 2001 से सन् 2011 के दशक के मध्य जहां पुरूष साक्षरता दर में 5.6 प्रतिशत वृद्धि हुई थी, वहीं स्त्री साक्षरता में हुई वृद्धि का दर 10.9 प्रतिशत रहा, जो कि साक्षरता कार्यक्रमों व अन्य शैक्षिक स्तरों पर स्त्रियों की बढ़ती सहभागिता की ओर संकेत करता है। यद्यपि पिछले एक दशक में स्त्री साक्षरता वृद्धि पुरूष साक्षरता की तुलना में 5.3 प्रतिशत अधिक रही तथापि स्त्री पुरूष साक्षरता दर के मध्य अभी भी 16.3 प्रतिशत का अन्तराल बना हुआ है। देश के कुछ राज्यों में एक तिहाई से अधिक जनसंख्या अभी भी असाक्षर है। बिहार में असाक्षरता का प्रतिशत 38.2 है तो अरूणाचल प्रदेश में 34.6 प्रतिशत, राजस्थान में 34 प्रतिशत, झारखण्ड में 33.6 तथा आन्ध्रप्रदेश में 33.2 प्रतिशत है। इसी प्रकार बिहार में 48.5 प्रतिशत महिलाएं असाक्षर हैं तो राजस्थान में 48 प्रतिशत, झारखण्ड में 44.6

प्रतिशत, जम्मू–कश्मीर में 43.6 प्रतिशत तथा उत्तर प्रदेश में 42.8 प्रतिशत महिलाएं आज भी असाक्षर हैं। वस्तुतः महिला साक्षरता और बालिकाओं की शिक्षा पर समुचित ध्यान केन्द्रित किए बिना हम मानव संसाधन के समग्र विकास के लक्ष्य को प्राप्त नही कर सकते हैं। इसीलिए औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाओं और महिलाओं को प्रमुख लक्ष्य समूह में सम्मिलित किया गया। वर्तमान में भी साक्षर भारत अभियान और सर्व शिक्षा अभियान में महिलाओं और बालिकाओं की सहभागिता पर विशेष बल दिया गया है।

पर बात इतने से बनेगी नहीं। हमें भारत के सभी प्रान्तों में समान रूप से जन साक्षरता बढ़ाने के प्रयासों को प्रभावी और परिणामोन्मुख बनाना होगा। दूसरी ओर प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की दिशा में भी त्वरित और ठोस उपलब्धियां प्राप्त करनी होगी। दोनों ही मोर्चो में गति, संवृद्धि के साथ–साथ गुणवत्ता का भी ध्यान रखना आवश्यक है। प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण और गुणवत्ता संवर्द्धन के द्वारा एक ओर जहां मानव संसाधन के निर्माण की नींव रखी जा सकती है वहीं दूसरी ओर भावी प्रौढ़ असाक्षरों की बढ़ती संख्या की संभावनाओं को भी कम किया जा सकता है। अतीत में लम्बे समय तक प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के अभाव के कारण देश में असाक्षरता उन्मूलन के प्रयासों में आशानुकूल सफलता नहीं मिल पाई है। 6 से 14 वर्ष के बच्चों का विद्यालय विमुख होना अथवा मध्यावधि में विद्यालय छोड़ने के कारण प्रौढ़ असाक्षरों की संख्या में कमी नहीं दिखाई देती। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में 6–14 वर्ष के बच्चों के लिए संविधान में पूर्ण और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रस्ताव रखा गया था और राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में इसे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के प्रथम दस वर्षों में ही हासिल करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात् छःदशकों से भी अधिक का समय बीत जाने के बावजूद हम प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सके हैं। भारतीय संसद में वर्ष 2002 में 86 वां संशोधन (अनु0 21(क)) अधिनियम पारित हुआ जिसके तहत 6–14 वर्ष के बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया। बावजूद इसके नतीजों में कोई बड़ा बदलाव नहीं हुआ और चुनौती क्रमशः गम्भीर होती गई।

अन्ततः भारतीय संसद ने 4 अगस्त 2009 को बच्चों के लिए मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा कानून को स्वीकृति प्रदान की। एक अप्रैल 2010 से लागू हुए इस कानून के अनुसार यह विदित हो गया कि अब मुफ्त एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा हर बच्चे का मूल अधिकार होगा और 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क शिक्षा देना हर राज्य की जिम्मेदारी होगी। इस कानून को शत–प्रतिशत साक्षरता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता कार्यक्रम एक दूसरे के पूरक हैं। सर्वशिक्षा अभियान और 'साक्षर भारत' कार्यक्रम इसी बात को सिद्ध करते हैं। सभी बच्चों को शत–प्रतिशत बुनियादी शिक्षा मुहैया कराने से ही भविष्य में प्रौढ़ असाक्षरता की समस्या पर विराम लगाना

सम्भव होगा, किन्तु ऐसा नहीं है कि वर्तमान में देश में मौजूद लगभग 28 करोड़ असाक्षरों तथा बुनियादी शिक्षा से वंचित और मध्यावधि में शिक्षा छोड़ने वाले असाक्षरों व अर्द्धसाक्षरों के लिए संचालित साक्षरता प्रयासों को शिथिल कर दिया जाए। वास्तव में तो असाक्षरता उन्मूलन के त्वरित प्रयासों को और अधिक गम्भीरता पूर्वक संचालित करने की आवश्यकता है, जिससे कि प्राथमिक शिक्षा और प्रौढ़ साक्षरता दोनों ही मोर्चो पर सफलता प्राप्त कर सक्षम और सामर्थ्यवान मानवीय संसाधन तैयार किए जा सकें।

देश की एक संस्था 'प्रथम' द्वारा प्रकाशित की जाने वाली असर – 2011 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में 6–14 वर्ष के लगभग 96 प्रतिशत बच्चे अब विद्यालयों में अपना नामांकन करा रहे हैं। सरकारी विद्यालयों की तुलना में प्राइवेट विद्यालयों के नामांकन में अधिक वृद्धि हुई है। दूसरी ओर प्रोग्राम फॉर इन्टरनेशनल स्टूडेन्ट एससमेन्ट (पीसा) के मूल्यांकन रिर्पोट – 2011 में शामिल 73 देशों में भारत को सबसे निचले अर्थात 72 वें स्थान पर दिखाया गया है। यह गौर करने लायक है। वस्तुतः हमारे यहां प्राथमिक विद्यालयों (निजी और सरकारी दोनों) में 'समझ' और 'ज्ञान' के स्थान पर 'मैकेनिकल रीडिंग' (रटने) पर अधिक ध्यान दिया जाता है। यहां बच्चों को एक निश्चित सांचे में ढ़ालने के लिये संसाधनों और प्रक्रियात्मक पहलुओं पर अधिक जोर दिया जाने लगा है। ऐसे में बुनियादी स्तर पर प्रदान की जा रही शिक्षा का गम्भीर और ज्ञान आधारित समाज की रचना से कोई खास सरोकार नही रह जाता है।

यदि हम बुनियादी स्तर पर प्रदान की जा रही शिक्षा के माध्यम से गम्भीर और ज्ञान आधारित समाज की रचना करना चाहते हैं तो हमें गुणवत्तापूर्ण बुनियादी शिक्षा की आधारशिला संवेदनशीलता, बाल–मनोविज्ञान, मूल्यों और निष्ठापूर्वक किए गए प्रयासों पर रखनी होगी और सरकारी स्कूलों की गिरती छवि को बदलने के लिए गम्भीर प्रयास करने होंगे जिसके लिए सरकार के साथ–साथ समाज को भी सार्थक और महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। मध्यान भोजन, यूनीफार्म, पुस्तकें और अन्य संसाधन जुटाकर हम नामांकन में वृद्धि अवश्य कर सकते हैं किन्तु बच्चों में गुणात्मक शिक्षा के विकास के लिये सरकार के साथ–साथ शिक्षकों, अभिभावकों और समाज को समर्पित भाव और अन्र्तदृष्टि के साथ जुड़ना होगा। इस प्रकार प्राथमिक शिक्षा की कामयाबी परोक्ष रूप से प्रौढ़ों की असाक्षरता की समस्या के निराकरण में सहायक होगी और सक्षम मानव शक्ति में संवृद्धि का मार्ग भी प्रशस्त करेगी।

एक शिक्षित और अशिक्षित व्यक्ति के सोचने और काम करने के तौर–तरीकों में फर्क होता है। दोनों के ज्ञान के स्तर, अभिवृत्ति और आचरण में व्यापक अन्तर होता है एक असाक्षर व्यक्ति प्रायः विकास की योजनाओं, आयोजन व सूचना के सभी शासकीय व अशासकीय प्रयासों के लाभ से वंचित रहता है। एक अशिक्षित और अकुशल समुदाय विकास

mmmmkkminmiojn

की मुख्य धारा से कटा रहता है। इस प्रकार देश के विकास पर भी इसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अतः असाक्षर व्यक्ति एक कुशल मानव संसाधन के रूप में राष्ट्र के विकास में उतना योगदान नहीं कर पाता है जितना कि वह साक्षर और सुशिक्षित होने के उपरान्त कर सकता है। किसी भी देश के नागरिक उस देश की पूंजी होते हैं। इस मानवीय पूंजी का समुचित और सही दिशा में उपयोग करने के लिए उसे शिक्षित और कुशल बनाने की आवश्यकता होती है। शिक्षित व्यक्ति पूर्वाग्रहों से मुक्त होता है। वह स्वविवेक से अपने और समाज के कल्याणार्थ भयमुक्त होकर समुचित निर्णय लेने में सक्षम होता है।

मानव संसाधन विकास एक व्यापक एवं बहुआयामी प्रणाली है। व्यापक अर्थ में मानव संसाधन विकास किसी समाज में समस्त व्यक्तियों के ज्ञान, रूचि तथा क्षमताओं में वृद्धि करने की एक प्रक्रिया है। राष्ट्रीय संदर्भ में यह विभिन्न क्षेत्रों में कार्यशील व्यक्तियों को आत्म–निर्भर बनाने तथा उसमें गौरव की भावना उत्पन्न करने हेतु एक नयी योजना उत्पन्न करने की प्रक्रिया है। आर्थिक दृष्टि से यह अर्थव्यवस्था के विकास हेतु मानवीय पूँजी के निर्माण तथा उसके प्रभावी उपयोग से संबंधित है। राजनैतिक दृष्टि से यह व्यक्तियों को राजनीतिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए तैयार करने की प्रक्रिया है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से यह व्यक्तियों के जीवन को समृद्ध बनाने की पद्धति है। देश के मानवीय संसाधन के निर्माण के लिये आधारभूत और अनिवार्य शर्त देश के नागरिकों में शिक्षा का प्रसार है। शिक्षित नागरिक ही विभिन्न क्षेत्रों में अपने गुणों, कौशलों और योग्यताओं को विकसित करने में समर्थ होते हैं और समुदाय तथा राष्ट्र के विकास के प्रति निष्ठावान और समर्पित भी होते हैं। बुनियादी तौर पर साक्षरता और शिक्षा ही नागरिकों में उच्च मानवीय संस्कारों के साथ–साथ विकास प्रक्रिया में सकारात्मक योगदान और समर्पण के भाव और सामर्थ्य विकसित करते हैं। समाज और राष्ट्र के सतत् और समावेशीय विकास के लिये साक्षरता और शिक्षा ही एकमात्र ऐसा शक्तिशाली माध्यम हैं जिससे 'कुशल मानव संसाधन' और 'ज्ञानवान समाज' का निर्माण करना सम्भव हो सकता है।

अतः एक उन्नतशील और सफल राष्ट्र निर्माण के लिये शिक्षित और कुशल मानवशक्ति का निर्माण करना आवश्यक है। इस ध्येय की प्राप्ति के लिये निम्न–दिशा में निरन्तर आगे बढ़ने और गम्भीर प्रयासों की आवश्यकता है –

- बुनियादी शिक्षा का सार्वभौमिकीकरण और गुणवत्ता संवर्द्धन पर विशेष बल देना।
- समयबद्धता के साथ सभी राज्यों में शत–प्रतिशत साक्षरता की प्राप्ति करना।
- अनुवर्ती और सतत् शिक्षा कार्यक्रमों से नवसाक्षरों को जोड़ना जिससे अधिगमरत समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो सके।
- सुदूरवर्ती क्षेत्रों, वंचित समुदायों, निर्धन वर्गों तथा महिलाओं की शिक्षा हेतु विशेष बल, सुविधाएं और प्रोत्साहन देना।

- शिक्षा और कौशल विकास कार्यक्रमों में सूचना संचार तकनीकि (ICT) का व्यापक और समुचित उपयोग करना तथा इन क्रियाकलापों के लिये समाज में दायित्वबोध उत्पन्न करना।

संदर्भ

1. प्रेम चन्द (2013)। लिटरेसी सिचुएसन इन इंडिया एण्ड स्टेट्स (2001 एण्ड 2011) कम्पेरेटिव एनॉलिसिस, इंडियन जनरल ऑफ एडल्ट एजुकेसन, आई.ए.ई.ए. पब्लिकेशन, इंद्रप्रस्थ रोड दिल्ली, पृष्ठ –33–40।
2. सुधा जी. एस. (1999), मानव संसाधन विकास की विचारधारा, मानव संसाधन प्रबन्ध, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर नई दिल्ली।
3. स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता का सवाल 'रिपोर्ट, सफलता, अमर उजाला, अप्रैल 2012, 82–85।
4. डा. किशन राम (2006)। साक्षरता अभियान एक परिचयात्मक अध्ययन, भारत में साक्षरता अभियान, कल्पज पब्लिकेशन्स, सी–30, सत्यवती नगर, दिल्ली–110052।
5. सिंह सुनील कुमार (2014), भारतीय संविधान, लूसेंट सामान्य ज्ञान, लूसेंट पब्लिकेशन, न्यू बाइपास रोड, आशोचक, पटना, पृ. 223।
6. ओझा, एन.एन., जनगणना 2011 अंतिम आंकड़ें, क्रानिकल बुक्स, क्रानिकल पब्लिकेशन प्रा. लि., पुस्तक प्रभाग।

तो बदल लो

–शालिनी कालड़ा

गुस्से में निकले ये शब्द, बाद में मेरे लिए हंसी का कारण बन गए।

मेरी एक पड़ोसिन अक्सर मुझसे बातें करने आ बैठती है। ज्यादातर उसका विषय होता है – मेरे पति देव की तारीफ और अपने पति देव की बुराई। दरअसल, उसके पतिदेव उसके घरेलू कामों में कोई मदद नहीं करते, जबकि मेरे पति देव को तो रसोई घर से विशेष लगाव है। हां! यह अलग बात है कि उनकी मदद के बाद मुझे रसोई समेटने में जो समय लगता है उतना खाना बनाने में भी नहीं लगता। लेकिन मेरी पड़ोसिन को तो इसका सपने में भी अनुमान नहीं।

एक दिन इसी बात को लेकर मेरे पतिदेव से बहस हो गई। वे तमतमाते हुए दफतर चले गए और मैं अपना गुस्सा बर्तनो पर उतार रही थी। इतने में मेरी पड़ोसिन घर आ गई। बातों – बातों में वह फिर मेरे पतिदेव की तरीफ और अपने पति की बुराई करने लगी। मैं गुस्से में तो थी ही, अचानक मेरे मुंह से निकला, तो बदल लो! मुझे अपने शब्दों का मतलब दो मिनट बाद समझ में आया। उसको तो मानो काटो तो खून नहीं। हां, उस दिन के बाद उसकी आदत जरुर बदल गई। (साभार दैनिक भास्कर)

उत्तराखण्ड में लैंगिक असमानता – एक विश्लेषण

– रेनू गौतम

उत्तराखण्ड संरचना की दृष्टि से एक नवोदित राज्य है, लेकिन भौगोलिक विशिष्टता की दृष्टि से यह अति प्राचीन काल से ही भारत के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में प्रख्यात रहा है। पर्वतराज हिमालय की गोद में अवस्थित उत्तराखण्ड ऋषि–मुनियों तथा तपस्वियों की भूमि रहा है, जिसे देवभूमि के रूप में जाना जाता है। पुराणों में इस स्थान को मानस केदारखण्ड का नाम भी दिया गया है। दिनांक 9 नवम्बर 2000 को भारतीय गणतन्त्र के 27वें राज्य के रूप में गठन के साथ ही उत्तराखण्ड नवीन अस्तित्व में आया। यह राज्य हिमालय पर्वत के पश्चिम भाग में स्थित है जिसका लगभग 63 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है। प्रशासनिक दृष्टि से यह राज्य 13 जनपदों, 49 तहसीलों, 95 विकासखण्डों तथा 16,414 ग्रामों से मिलकर बना है। भारत के सम्पूर्ण भू–भाग के क्षेत्रफल एवं जनसंख्या के संदर्भ में दृष्टि डाली जाये तो स्पष्ट होता है कि 53483 वर्ग कि0मी0 क्षेत्रफल में फैले उत्तराखण्ड का क्षेत्रफल भारत के सम्पूर्ण भू–भाग (3287263 वर्ग कि.मी.) का 1.67 प्रतिशत है। इस भू–भाग पर राष्ट्र के सापेक्ष (0.83) प्रतिशत जनसंख्या निवास कर रही है। यहां सम्पूर्ण जनसंख्या का 78 प्रतिशत ग्रामीण तथा 22 प्रतिशत भाग शहरी है। इस राज्य में 86 नगर एवं कस्बे हैं जिनमें से केवल सात (देहरादून, हरिद्वार, रुड़की, हल्द्वानी, रुद्रपुर, काशीपुर और ऋषिकेश) बड़े नगर हैं जिनकी जनसंख्या एक लाख से अधिक है। यह अध्ययन उत्तराखण्ड के विशेष परिप्रेक्ष्य में है जिसमें राज्य की लैंगिक स्थिति अर्थात् लिंगानुपात का विश्लेषण किया गया है।

किसी भी समाज की उन्नति एवं प्रगति के लिए पुरूषों के समान ही महिलाओं का सहयोग भी आवश्यक है। पर वास्तव में ऐसा नहीं हो पाता है। जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं के समान सहयोग के लिए जिस प्रकार का सामाजिक माहौल, जनमानस तथा सुरक्षा व्यवस्था की आवश्यकता होती है उसे प्रदान करने के लिए विशेष प्रस्तुति की जरुरत है और इन जरुरतों में प्रथम यह कि महिला और पुरुष को समान माना जाए। जब ऐसा नहीं हो पाता है तो उसे लैंगिक असमानता कहते हैं। यह लैंगिक असमानता एक सामाजिक बुराई है। समाजशास्त्र की परिभाषा में यदि कहें तो परिवार समाज की इकाई है इसलिए परिवार के दो स्तम्भ पुरुष और महिला दोनों का समान महत्व होना चाहिए। उत्तराखण्ड में ऐसा नहीं है। यहां समाज के अन्दर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में लैंगिक असमानता दृष्टिगोचर होती है। हम यह भी नहीं कह सकते कि समाज के असाक्षर और कम जागरूक लोगों में ही लैंगिक असमानता होती है। तमाम अध्ययनों से ज्ञात होता है कि जागरूक और शिक्षित

समाज में कन्या भ्रूण हत्या की जानकारी और लिंग जांच करवाने वालों की संख्या दोनों ही अधिक होती है। कन्या भ्रूण हत्या में केवल पुरूष की भूमिका नहीं होती है बल्कि इसमें कहीं न कहीं महिला की भी सहमति होती है। परिवार में इसे रोकने के लिए स्वः अन्तर्प्रेरणा की आवश्यकता होती है तथा समाज में इस प्रकार की अत्याचारों को रोकने के लिए जागरूकता एवं अभिप्रेरणा की जरूरत होती है।

लेकिन उतराखण्ड के संदर्भ में यदि जनगणना 2001 और जनगणना 2011 के आंकड़ों (तालिका – 1) पर गौर करें तो ज्ञात होता है कि न केवल राज्य स्तर पर बल्कि जिलों के स्तर पर भी यहां महिला एवं पुरुष जनसंख्या के बीच बड़ा अन्तर है जो राज्य में विद्यमान लैंगिक असमानता की ओर इंगित करता है।

उत्तराखण्ड में जिलेवार व लिंगवार जनसंख्या वितरण – 2011

क्र0	राज्य / जिला	जनसंख्या 2001			जनसंख्या 2011		
		कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला
01	उत्तरकाशी	295013	152016	142997	329686	168335	161351
02	चमोली	370359	183745	186614	391114	193572	197542
03	रूद्रप्रयाग	227439	107535	119904	236857	111747	125110
04	टिहरी ग0	604747	295168	309579	616409	296604	319805
05	देहरादून	1282143	679583	602560	1698560	893222	805338
06	गढ़वाल	697078	331061	366017	686527	326406	360121
07	पिथौरागढ़	462289	227615	234674	485993	240427	245566
08	बागेश्वर	247163	117374	129789	259840	124121	135719
09	अल्मोड़ा	632866	294984	337882	621927	290414	331513
10	चम्पावत	224542	111084	113458	259315	130881	128434
11	नैनीताल	762909	400254	362655	955128	494115	461013
12	ऊ.सिं. नगर	1235614	649484	586130	1648367	858906	789461
13	हरिद्वार	1447187	776021	671166	1927029	1025428	901601
	उत्तराखण्ड	**8489349**	**4325924**	**4163425**	**10116752**	**5154178**	**4962574**

स्रोत– भारत की जनगणना 2011

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तराखण्ड की कुल जनसंख्या 10,11,6752 है जिसमें पुरूषों की संख्या 51,54,178 तथा महिलाओं की संख्या 49,62,574 है। इस प्रकार

राज्य में महिला पुरुष का अनुपात 963 है। सन् 2001 में यह अनुपात 962 थी। इसका तात्पर्य यह है कि तमाम कोशिशों के वावजूद राज्य के लिंग अनुपात में महज एक प्रतिशत की वृद्धि हुई है (तालिका – 2)।

तालिका 2

उत्तराखण्ड में जिलेवार महिला –पुरूष लिंगानुपात – 2001 व 2011

क्र.स.	राज्य / जिला	महिला – पुरूष अनुपात 1000 पुरूषों पर महिलाओं की संख्या	
		2001	2011
01	उत्तरकाशी	941	959
02	चमोली	1016	1021
03	रूद्रप्रयाग	1115	1120
04	टिहरी गढ़वाल	1049	1078
05	देहरादून	887	902
06	गढ़वाल	1106	1103
07	पिथौरागढ़	1031	1021
08	बागेश्वर	1106	1093
09	अल्मोड़ा	1145	1142
10	चम्पावत	1021	981
11	नैनीताल	906	933
12	ऊ0सिं0नगर	902	919
13	हरिद्वार	865	879
	उत्तराखण्ड	962	963

स्रोत– भारत की जनगणना 2011

उपरोक्त तालिका में प्रदत आंकड़ों से स्पष्ट है कि जनसंख्या के आकार की दृष्टि से उतराखण्ड में सबसे बड़ा जनपद हरिद्वार है, जिसकी कुल जनसंख्या 1927029 तथा लिंगानुपात 879 है। हरिद्वार के बाद दूसरा, तीसरा और चौथा स्थान क्रमशः देहरादून (जनसंख्या 1698560 और लिंगानुपात 902), उधम सिंह नगर (जनसंख्या 1684367 और लिंगानुपात 919) और नैनीताल (जनसंख्या 955128 और लिंगानुपात 933) का है। दूसरी ओर कम जनसंख्या रखने वाले जिले क्रमशः उत्तरकाशी (जनसंख्या 329686 और लिंगानुपात 959), चम्पावत (जनसंख्या 259315 और लिंगानुपात 981) है। इन छः जनपदों में लिंगानुपात काफी असंतुलित है।

अन्य सात जिलों की स्थिति इस प्रकार है – पौड़ी गढ़वाल (जनसंख्या 686527 और लिंगानुपात 1103), टिहरी (जनसंख्या 616409 और लिंगानुपात 1078), अल्मोड़ा (जनसंख्या 621927 और लिंगानुपात 1142), बागेश्वर (जनसंख्या 259840 और लिगांनुपात 1093), चमोली (जनसंख्या 391114 और लिंगानुपात 1027) तथा पिथौरागढ़ (जनसंख्या 485993 और लिंगानुपात 1021) है।

यदि देश के औसत लिंगानुपात (940) के साथ उत्तराखण्ड में लिंगानुपात (963) की तुलना करें तो पाते हैं कि यह सामान्य से बेहतर स्थिति में है। परन्तु चौंकाने वाली बात यह है कि 0–6 आयु वर्ग में उत्तराखण्ड का लिंगानुपात 886 है जो कि अत्यन्त गंभीर विषय है। आंकड़े बताते हैं कि प्रदेश में समाज के प्रत्येक क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव और परिवर्तन हो रहा है लेकिन बेटी और बेटे के बीच वर्तमान भेदभाव को दूर करने में अपेक्षाकृत कम परिवर्तन हो रहा है। यद्यपि यह दावे के साथ नहीं कहा जा सकता है कि शिक्षा के द्वारा ही लैंगिक असमानता पूरी तरह समाप्त हो जाएगी पर इतना तो निश्चित है कि शिक्षित समाज में लैंगिक असमानता को समाप्त करने के लिए आवश्यक स्वःप्रेरणा, समझदारी और जागरूकता सरलता और प्रभावी ढ़ंग से विकसित हो पाती है। तालिका 3 उतराखण्ड में साक्षरता की मौजूदा स्तर को स्पष्ट करती है।

तालिका 3

उत्तराखण्ड में जिलेवार व लिंगवार साक्षरता दर 2011

क्र.संख्या	राज्य/जिला	साक्षरता दर		
		कुल	पुरूष	महिला
01	उत्तरकाशी	75.98	89.26	62.23
02	चमोली	83.48	94.18	73.20
03	रूद्रप्रयाग	82.09	94.97	70.94
04	टिहरी गढ़वाल	75.10	89.91	61.77
05	देहरादून	85.24	90.32	79.61
06	गढ़वाल	82.59	93.18	73.26
07	पिथौरागढ़	82.93	93.45	72.97
08	बागेश्वर	80.69	93.20	69.59
09	अल्मोड़ा	81.06	93.57	70.44
10	चम्पावत	80.73	92.65	68.81
11	नैनीताल	84.85	91.09	78.21
12	ऊ.सिं.नगर	74.44	82.48	65.73
13	हरिद्वार	74.62	82.26	65.96
	उत्तराखण्ड	79.63	88.33	70.70

स्रोत– भारत की जनगणना 2011

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि प्रदेश के सभी 13 जनपदों में साक्षरता का स्तर 70 से ऊपर है और महिला साक्षरता का स्तर भी 60 से ऊपर है। प्रश्न उठता है कि फिर प्रदेश में इस प्रकार की लैंगिक असमानता क्यों है ? विश्लेषण से ज्ञात होता है कि यहां के चार जनपदों क्रमशः हरिद्वार (74.62:), देहरादून (85.24:), उधम सिंह नगर (74.44:) और नैनीताल (84.85:) में उच्च साक्षरता दर है जबकि लिंगानुपात हरिद्वार (879), देहरादून (902), उधम सिंह नगर (919) और नैनीताल (933) है। अब विचारणीय प्रश्न यह है कि साक्षरता स्तर ऊंचा

होने के पश्चात भी यहां लिंगानुपात कम और असंतुलित क्यों है? सामान्यतः साक्षरता के सापेक्ष लिंगानुपात संतुलित होना चाहिए था।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के अनुसार समान योग्यता वाले महिला और पुरूष में किसी भी काम के लिए किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद 15 भारत के नागरिकों के बीच जाति, लिंग, धर्म या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव की अनुमति नहीं देता है। लेकिन इन दोनों संवैधानिक प्रावधानों, उच्च्च साक्षरता दर और तमाम सरकारी तथा स्वयंसेवी प्रयासों के बाद भी प्रदेश में लैंगिक असमानता एक विकार की तरह मौजूद है जिसे जिसे दूर करने के लिए नवीन प्रतिबद्धता की आवश्यकता होगी।

लैंगिक असमानता के लिए उत्तरदायी कारक यथा लिंग परीक्षण, कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह आदि की समस्याएं कैसे दूर की जाएं इस पर सारे देश में लगातार प्रयास किया जा रहा है। उत्तराखण्ड के विशेष संदर्भ में यह असमानता कैसे दूर की जाए इस पर भी गहन विचार करना होगा। केरल में उच्च्च साक्षरता दर होने के कारण जन्म दर और मृत्यु दर दोनों को कम किया जा सका है तथा जनसंख्या नियंत्रित है फिर उत्तराखण्ड में साक्षरता के उच्च्च स्तर होने के बावजूद भी लैंगिक असमानता क्यों हैं? इसके कारणों को भी जानना होगा तथा इसके निदान के लिए जरुरी शोध कार्य भी करने होंगे। इस दिशा में आवश्यक परिवर्तन के लिए व्यापक आंदोलन की जरुरत हो सकती है। इस आंदोलन में संघर्षरत महिलाएं उत्तराखण्ड के बछेन्द्री पाल, गौरा देवी, टिंचरी माई, लक्ष्मी टम्टा, गंगोत्री गर्बयाल सहित पर्यावरण संरक्षण में अद्भुत योगदान देने वाली गोपेश्वर की कुंवरी देवी, टिहरी की हिमाला बहन, जोशीमठ की बौंणी देवी आदि महिलाओं से प्रेरणा प्राप्त हो सकती हैं। ऐसे किसी आंदोलन में शिक्षण संस्थाओं, स्वयं सेवी संस्थाओं और विकासात्मक विभागों, संगठनों और एजेन्सियों की भी भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती हैं।

"इतिहास और साहित्य की पृष्ठभूमि से अनभिज्ञ वकील एक ऐसे राजगीर की तरह है जिसका काम केवल एक ईंट पर दूसरी ईंट रखते जाना है, लेकिन इतिहास और साहित्य की मजबूत समझ रखने वाला वकील एक ऐसा वस्तुकार है जो कई दशकों तक चलने वाले समूचे भवन की कल्पना कर सकता है।"

— लॉड डेनिंग

"विश्व पहले से कहीं ज्यादा तेजी से बदल रहा है और हम इससे अनजान नहीं रह सकते। यदि हम नई खोज नहीं करेंगे, यदि हम अत्याधुनिक उत्पादों का निर्माण नहीं करेंगे तो गतिहीनता आ जाएगी।"

— प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी

पंचायती राज

(महात्मा गांधी आजीवन ग्राम स्वराज की वकालत करते रहे। उनकी कोशिश थी कि देश का प्रत्येक गांव एक स्वावलम्बी इकाई के रुप में विकसित होते हुए राष्ट्र के समग्र विकास में अपना सार्थक योगदान करे। इसके लिए आवश्यक था कि गांव के लोग अपने विकास की योजना स्वयं बनाएं तथा स्थानीय संसाधनों का समुचित उपयोग करते हुए उसे स्वयं ही क्रियान्वित करें जिसके लिए ग्रामीण स्व–शासन को संस्थागत रुप प्रदान करने की जरुरत थी। पर कारण चाहे जो भी रहा हो स्वाधीनता के कई दशकों के बाद भी गांधी के इस विचार को तत्कालीन सरकारों द्वारा अपेक्षित प्रमुखता प्रदान नहीं किया जा सका और ना ही ग्रामीण स्व–शासन को संस्थागत रुप प्रदान किया जा सका। राजीव गांधी ने ग्रामीण स्व–शासन को संस्थागत बनाने की योजना पर गंभीरता से काम करना प्रारम्भ किया। उन्होंने एक प्रधानमंत्री के रूप में इस प्रक्रिया को एक राष्ट्रीय आयाम देने का भी प्रयास किया। पंचायती राज संस्थाओं को वैधानिक स्वरुप प्रदान किया जाने का कार्य राजीव गाांी के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक योगदानों में से एक था जो प्रक्रिया अब भी जारी है। इस हेतु भारतीय संविधान में आवश्यक संशोधन के लिए संशोधन विधेयक को संसद पटल पर रखते हुए राजीव गांधी ने संसद को संबोधित किया। यह संबोधन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से राष्ट्रीय विकास में सामान्य नागरिक तक की भूमिका को स्पष्ट करता है। वर्तमान में वे सभी संस्थाएं तथा सामाजिक कार्यकत्ता जो जमीनी स्तर पर भारत के नागरिकों के सशक्तीकरण के लिए प्रयत्नशील हैं इस भाषण से उन्हें यह सहज ही ज्ञात हो सकेगा कि पंचायती राज संस्थाओं की दिशा क्या थी और इस दिशा में चलते हुए उनकी उपलबे किस हद तक सफल हो सकी है। प्रस्तुत है अक्टूबर 1989 में नई दिल्ली में राजीव गांधी द्वारा दिया गया भाषण का मुख्य कलेवर।)

मैं पंचायती राज और नगर पालिकाओं से संबंधित विधेयकों पर हुई बहस को बहुत गहरी दिलचस्पी से सुन रहा था। ये संविधान संशोधन, जिन्हें पिछले सत्र में मुझे सदन के सामने रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, सचमुच ऐतिहासिक और क्रांतिकारी महत्व के कदम हैं। इसीलिए इसमें आश्चर्य की बात नहीं थी कि बहस कभी तूफानी, कभी तीक्ष्ण और कभी विचारपूर्ण नहीं रही; परंतु हर समय जीवंत भी रही। इस बहस में अपना महत्वपूर्ण योगदान, जो निश्चित रूप से एक लंबे समय तक संवैधानिक इतिहास की पाठ्य–पुस्तकों में स्थान पाता रहेगा, देने के लिए मैं सदन के दोनों पक्षों के सभी सदस्य सांसदों को धन्यवाद देना चाहता हूँ।

कुल मिलाकर, मुझे लगता है कि अधिकतम प्रजातंत्र और (धन तथा शक्ति के) अधिकतम हस्तांतरण की आवश्यकता को लेकर आम सहमति है। जिन बातों पर विवाद हैं, वे हैं संवैनिक अधिकार क्षेत्र, राजनीतिक औचित्य, चुनावी उद्देश्य और विधायी ब्योरों संबंधी मुद्दे। महोदया, आप इन आशंकाओं में से प्रत्येक पर बारी–बारी से मुझे अपनी बात कहने की अनुमति दें।

दोनों सदनों में अब यह बात ठीक से स्थापित हो चुकी है कि इन संवैधानिक संशोधनों को प्रस्तावित करने की संघ सरकार की सक्षमता में कोई संदेह नहीं है। हमने संघ और राज्यों के बीच स्थापित आवश्यक संवैधानिक संबंधों का अतिक्रमण न करने में अधिकतम संयम दिखाया है। हमारा मूलभूत उद्देश्य विकास की प्रक्रिया में जन–भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए पंचायतों व नगरपालिकाओं में प्रजातंत्र को संवैधानिक पवित्रता प्रदान करना और उनके लिए पर्याप्त रूप से शक्तियों एवं धन का हस्तांतरण करना है।

महोदया, पहली बात तो यह है कि हमने राज्य सूची में प्रविष्टि पाँच को ज्यों–का–त्यों रखा है। ग्रामीण व शहरी स्थानीय निकायों और नगरपालिकाओं से संबंधित कानून बनाने के राज्य विधानमंडलों की सक्षमता के साथ किसी तरह की छेड़छाड़ नहीं की गई है। दूसरे, संवैनिक संशोधनों का प्रारूप तैयार करने में इस बात की सावधानी बरती गई है कि इस विषय पर बनाने वाले कानूनों का प्रारूप तैयार करने का कार्य पूरी तरह से राज्य विधानमंडल और इन संवैधानिक संशोधनों के लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से आवश्यक आदेश जारी करने का कार्य राज्य सरकारों पर छोड़ दिया जाए। केवल एक बात, जिसपर मैं जोर देना चाहूँगा, वह यह है कि नगरपालिका संबंधी सभी कानूनों को संविधान के प्रावधानों से संगत होना चाहिए। पारित होने पर ये दोनों संशोधन एक मंच तैयार करेंगे, जिसके आधार पर राज्य विधानमंडल विस्तृत कानून बनाएंगे।

तीसरा, यह कहना – जैसा कि सामने बैठे कुछ सदस्यों ने आरोप लगाया है – गलत और भ्रम पैदा करनेवाला है कि हमने विस्तृत संविधान संशोधनों की आड़ में विस्तृत नगरपालिका कानूनों का प्रारूप बनाने का प्रयत्न किया है। हमने चुनावों की नियमितता तथा मनमाने और लंबे स्थगनों की संभावना समाप्त करने जैसे आवश्यक प्रावधानों तक स्वयं को सीमित रखा है। हमसे पूछा गया कि हमने ग्राम, मध्यवर्ती और जिला स्तरों पर पंचायतों का इतना विस्तृत सामान्य ढ़ांचा और साथ ही जनसंख्या के आकार के आधार पर नगरपालिकाओं का सामान्य ढ़ांचा क्यों निर्धारित किया है? इसका उत्तर सीधा है। एक समान ढ़ांचे का अर्थ है स्थानीय निकायों में प्रजातांत्रिक प्रतिनिधित्व का एक समान नमूना और मात्रा। देश के एक भाग से दूसरे भाग में प्रजातंत्र के नमूने और उसकी प्रबलता में अंतर क्यों होना चाहिए? आखिरकार, हम सब एक ही देश के हैं। हमारे मन में एक और प्रमुख लक्ष्य है, उस भारी

अंतर या दूरी को कम करना जो एक मतदाता और उसके प्रतिनिधि के बीच में है। हमारे जैसे विशाल देश में 80 करोड़ लोगों के सीधे प्रतिनिधित्व के लिए वर्तमान में लगभग 5,500 व्यक्ति (5,000 राज्य विधानमंडलों में और लगभग 500 संसद् में) हैं। अपने निर्वाचित प्रतिनिधि की सहायता चाहने वाले मतदाताओं की संख्या इतनी अधिक है कि ऐसा कोई उपाय नहीं जिससे वह प्रतिनिधि समग्र रूप से अपने पूरे निर्वाचन मंडल पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दे सके। इसका अर्थ यह भी है कि लोगों को अपनी जमीनी समस्याओं के हल के लिए भी अपने विधायक या संसद सदस्य तक जाना पड़ता है। पंचायती राज और नगरपालिका विधेयक कई लाख निर्वाचित जमीनी प्रतिनिधियों को जन्म देंगे जिससे कि मतदाताओं और उनके प्रतिनिधि के बीच की दूरी बहुत कम हो जाएगी, सत्ता के दलालों को अपनी मलाईदार स्थितियों से हाथ धोना पड़ेगा और जमीनी समस्याओं का हल जमीनी स्तर पर ही मिल जाएगा। ऐसा कोई कारण नहीं है कि ये लाभ देश की सारी जनता को समान रूप से न मिल सकें। स्थानीय निकायों के ढ़ांचे में एकरूपता के जरिए ही वह लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

तीसरा बिंदु अधिक महत्व का है। हम सभी स्थानीय निकायों में आरक्षण के जरिए समाज के कमजोर वर्गों का उचित प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए कृत–संकल्प हैं। आरक्षणों में एकरूपता सुनिश्चित करने का एक ही उपाय है, स्थानीय प्रशासन के ढ़ांचे में एकरूपता लाना। स्थानीय प्रशासन में एक समान ढ़ांचा सुनिश्चित किए बिना यदि हमने आरक्षणों में एकरूपता लाने का प्रयास किया होता तो जो जटिलताएं पैदा हो जातीं, वे एक उदाहरण से स्पष्ट हो जाएंगी। वर्तमान में, कांग्रेस–शासित महाराष्ट्र और गैर–कांग्रेसी दलों द्वारा शासित पश्चिम बंगाल सहित कुछ राज्यों में पंचायत समिति एक ऐसा निकाय है, जो सीधे जनता द्वारा चुना जाता है; परंतु कुछ अन्य राज्यों में पंचायत समिति सीधे चुना जानेवाला एक निकाय नहीं बल्कि ग्राम पंचायतों के प्रमुखों से बनी हुई समिति है। जनता द्वारा सीधे चुनी जानेवाली समिति के लिए यह पूरी तरह संभव है कि अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए उनकी आबादी के अनुपात में और महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत सीटे आरक्षित कर दी जाएं। परन्तु यदि पंचायत समिति एक सीधे चुना गया निकाय न होकर ग्राम पंचायत प्रमुखों की एक समिति मात्र हो तो अनुसूचित जाति/जनजातियों के लिए अनुपातिक प्रतिनिधित्व या महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत आरक्षण कैसे सुनिश्चित किया जा सकेगा? पूरे देश के लिए स्थानीय प्रशासन का एक समान ढांचा निर्धारित करने के पीछे हमारा उद्देश्य एक बहुलतावादी देश पर मनमाने ढंग से एक समान ढ़ांचा थोपना नहीं है। केवल अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के लिए पूरे देश में एक समान आरक्षण सुनिश्चित करने के लिए ही ऐसा किया जा रहा है। देश की विविधता के तथ्य को स्वीकार करने में हम किसी से पीछे नहीं हैं। हमारे देश की बहुरंगी संस्कृतियों का उत्सव मनाने में हम किसी से पीछे नहीं हैं। अनेकता में एकता के सिद्धांत का प्रबलतम समर्थक होने, यह

स्वीकार करने एंव दृढ़ता से कहने में कि विविधता की उदार हृदय स्वीकृति से ही भारत जैसे देश में एकता संभव है, हम किसी से पीछे नहीं हैं। विविधता के समान करने का अर्थ है इस बात का उत्सव मनाना कि देश के कुछ भागों में ताड़ का पेड़ उगता है और दूसरों मे चिनार का। परंतु इस बात का हरिजनों और आदिवासियों के उत्पीड़न और महिलाओं के साथ भेदभाव से क्या संबंध है? निश्चित रूप से केरल की महिलाएं पंचायतों में समानता के व्यवहार की उतनी ही हकदार हैं जितनी कश्मीर की महिलाएं, इसी तरह कहीं भी रहनेवाले अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोग समान प्रतिनिधित्व के अधिकारी हैं। विविधता का अर्थ है तंजावर में कर्नाटक संगीत का, बंगाल में बाउल का, ग्वालियर में ध्रुपद का और राजस्थानी लोकगीतों का सम्मान करना। परंतु क्या इसका अर्थ यह है कि तमिलनाडु में आरक्षण व्यवस्था बंगाल की आरक्षण व्यवस्था से अलग होनी चाहिए? क्या इसका अर्थ यह है कि राजस्थान के आदिवासी के साथ मध्य प्रदेश के आदिवासियों से अलग व्यवहार किया जाना चाहिए या यह कि देश के एक भाग में अनुसूचित जातियों को उनकी आबादी के अनुपात में आरक्षण मिले, परंतु देश के दूसरे भागों में रहनेवाले अनुसूचित जाति के लोगों को इस सुविध ा से वंचित रखा जाए? ऐसा करना अनेकता में एकता के महान् सिद्धांत का मखौल उड़ाने के बराबर होगा।

हम अपने देश की बौद्धिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विविधता पर गर्व करते हैं। पंरतु जैसा मैंने पहले कहा, हम सब एक देश हैं। जहां तक उत्पीड़न और भेदभाव का सवाल है, भारत के लोग सभी प्रकार के उत्पीड़न, दमन, सामाजिक अत्याचारों और कालातीत नैतिक मूल्यों के एक समान अंत की मांग करने में एकमत हैं। महोदया, मैं एक बार फिर दोहराता हूं कि देश भर में एक समान आरक्षण प्रणाली सुनिश्चित करने के लिए ही हम स्थानीय प्रशासन का एक समान ढांचा निर्धारित करने के लिए मजबूर हुए हैं।

अब मैं राजनीतिक औचित्य के सवाल पर आता हूं, जिसने सामने बैठे मेरे मित्रों की भावनाओं को उद्वेलित कर दिया है। हमसे पूछा गया है कि प्रधानमंत्री जिला मैजिस्ट्रेट्स के सीधे संपर्क में कैसे रह सकते हैं? मेरा जवाब है – भारत जैसे देश के प्रधानमंत्री को प्रध ाानमंत्री बने रहने की क्या जरुरत है, जब तक कि वह गरीब से गरीब व्यक्ति की झोपड़ी और हमारे विशाल व बहुरंगी देश के सुदूर गांव में भी स्वयं को सहज महसूस न करे? मैंने सैकड़ों गांवों का दौरा किया है। मैंने अनगिनत लोगों से बात की है। वहां उनके घरों में मैंने एक निष्क्रिय प्रशासन की निर्दयता, एक हृदयहीन प्रशासन का अत्याचार, वह बेदर्द संवेदनहीनता अनुभव की है, जिसका सामना हमारे, अधिकांश लोगों को हर दिन करना पड़ता है। फिर मैंने प्रशासकों को देखा – उनमें से अधिकांश समर्पित युवक और युवतियां हैं जो असाधारण रूप से बुद्धिमान हैं तथा उन लोगों के प्रति गहरे सरोकार से युक्त हैं जिनकी सेवा के लिए उन्हें नियुक्त किया गया था, परंतु फिर भी स्पष्ट रूप से वे अपने उत्साह और

व्यक्तिगत संवेदनशीलता को एक तत्पर प्रशासन का रूप देन में असमर्थ हैं। मैं इस पहेली का हल और इस समस्या का समाधान चाहता था। इस तरह मैंने जिला मैजिस्ट्रेट्स से ही सवाल करने का फैसला किया। इसमें क्या गलत हो सकता था ?

जो भी हो, जिला मैजिस्ट्रेटों के साथ मेरी मुलाकात में गोपनीय कुछ नहीं था। पहली मुलाकात भोपाल में हुई थी। मैंने मुख्यमंत्री श्री मोतीलाल वोरा को भी शामिल होने के लिए बुलाया था। उन्होंने स्वीकार कर लिया और बैठक में वे हमारे साथ थे। दूसरी मुलाकात हैदराबाद में हुई। बैठक में साथ देने के लिए मैंने मुख्यमंत्री श्री एन.टी.रामाराव को आमंत्रित किया था। उन्होंने अभिमानपूर्वक मना कर दिया। इसकी वजह वह ही बेहतर जानते थे। हैदराबाद एयरपोर्ट पर मैंने एक बार फिर उनसे कहा। उन्होंने फिर मेरे साथ आने से इनकार कर दिया। अब विपक्ष उलटे मुझसे कैसे कह सकता था कि मुख्यमंत्रियों के पीठ पीछे मैंने जिला मैजिस्ट्रेटों से बात की?

जब ग्राम प्रधानों, संरपचों, पंचायत समिति प्रमुखों और जिला परिषदों के अध्यक्षों से मिलने की बात आई तो हमने ये सम्मेलन आयोजित करने के लिए कम–से–कम दो विपक्ष–नीत राज्य सरकारों का सहयोग लेने की सावधानी बरती। मुख्यमंत्री ज्योति बसु उदारतापूर्वक सहयोग देने के लिए राजी हो गए और हमने एक अत्यंत ज्ञानवर्धक व उपयोगी सम्मेलन कलकत्ता में आयोजित किया – उस राज्य की गैर–कांग्रेसी सरकार के प्रतिनिधियों की सक्रिय उपस्थिति में। बंगलौर में होनेवाले साउथ जोन सम्मेलन के लिए हम एक विपक्षी सरकार से बात कर ही रहे थे कि वह सरकार अपनी ही अस्थिरता के कारण गिर गई। यदि जनता दल साउथ जोन सम्मेलन की मेजबानी करने में असफल रहा तो वह हमारी ओर से किसी कमी के कारण नहीं बल्कि पंचायत प्रतिनिधियों के पहुंचने तक सरकार बचाने में उनकी असमर्थता के कारण।

हमने प्रत्येक स्तर के व्यक्तियों–हमारे गांव के सामान्य लोगों से शुरूआत करते हुए, जिनसे मैंने बात की; फिर जिला मैजिस्ट्रेटों, मुख्य सचिवों तथा भारत सरकार के सचिवों सहित अधिकारी वर्ग और फिर राज्यों के पंचायत एवं स्थानीय स्वशासन मंत्रियों व मुख्यमंत्रियों के साथ खुलकर चर्चा की। ऐसा कभी नहीं हुआ कि हम उनसे मिलने से कतराए हों। परंतु यह खेद की बात है कि कुछ विपक्ष–नीत राज्य सरकारों ने इन सम्मेलनों में अपने अधिकारियों, यहां तक कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को भेजने से इनकार कर दिया और फिर अपनी सरकारी जिम्मेदारियों को नकारने के शर्मनाक कृत्य का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने मेरे द्वारा जुलाई के आरंभ में बुलाए गए मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में भाग नहीं लिया।

महोदया, चर्चा की एक खुली व पारदर्शी प्रक्रिया, जो स्वतंत्र भारत के इतिहास में अभूतपूर्व है, के पूर्ण होने के बाद हम इस सदन में आए हैं। हम जो संशोधन प्रस्तुत कर रहे हैं वे

स्थानीय निकायों के हजारों निर्वाचित प्रतिनिधियों, सैकड़ों जिला मैजिस्ट्रेटों, बीसियों वरिष्ठ सरकारी अधिकारियों और दर्जनों मंत्रियों व मुख्यमंत्रियों के विचारों का आसवित सार है। हमारी ओर से कोई अनुचित कार्य नहीं हुआ है। एकमात्र अनौचित्य उस अभद्रता में निहित है, जिसके साथ एक सदाशयपूर्ण निमंत्रण ठुकरा दिया गया था।

महोदया, इस महत्वपूर्ण विधान, जिस पर कुछ समय बाद यह सदन मत विभाजन करने वाला है, पर चर्चा करते हुए विपक्ष ने अगले आम चुनावों से निकटता को बहुत उछाला है। इस बिंदु में निहित मुद्दे को मैं ठीक से नहीं समझ पा रहा हूं। क्या यह एक सच्चाई नहीं है कि हम पांच वर्षों की अवधि के लिए शासन व विधायी कार्य करने के लिए निर्वाचित हुए थे ?

क्या यह एक तथ्य नहीं कि हम जनता के विकास और प्रगति के उद्देश्य से उनकी सेवा करने के लिए पांच वर्षों की अवधि के लिए चुने गए थे? क्या हम केवल इसलिए शासन और विधायी कार्य बंद कर दें कि आम चुनाव निकट आ गए हैं ? देश की जनता ने हमें यह जिम्मेदारी दी है। हम जनता के प्रति और केवल जनता के प्रति उत्तरदायी हैं। संसदीय आचरण की चालाकी से भरी इस भ्रांत व्याख्या, जो आम चुनाव की निकटता के कारण हमें विधायी कार्य करने से रोकती हो, को हम अस्वीकार करते हैं।

बहरहाल, महोदया, हमारे वर्तमान कार्यकाल की शुरूआत में ही जनवरी 1985 में राष्ट्र को किए गए अपने पहले संबोधन में मैंने लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार प्रशासन को चुस्त और दुरूस्त बनाने की योजना का मंसूबा जाहिर किया था। दिसंबर 1985 में बंबई में आयोजित कांग्रेस जन्म–शताब्दी वर्ष के अवसर पर दिए भाषण में मैंने ये मुद्दे उठाए थे। अगस्त 1986 में सरकार की यह मंशा 'सवेदनशील प्रशासन' शीर्षक से बीस सूत्री कार्यक्रम में बीसवें सूत्र के रूप में शामिल की गई थी।

मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि एक असंवेदनशील प्रशासन को उत्तरदायी बनाने के लिए उस समय हम प्रबंधकीय समाधानों के बारे में सोच रहे थे। इस समस्या के समाधान के लिए हम कार्य–प्रणाली के सरलीकरण, शिकायत–निवारण व्यवस्था, एकल खिड़की निपटान व्यवस्था, कंप्यूटरीकरण और विनम्रता जैसे उपायों के बारें में सोच रहे थे। हमारे अनुभव ने बताया कि ये प्रबंधकीय समाधान काफी नहीं होंगे। हमें व्यवस्था–मूलक समाधनों की आवश्यकता थी।

पंचायती राज और नगरपालिका विधेयक लगभग चालीस वर्ष पहले संविधान के प्रभावी होने के बाद भारतीय शासन–तंत्र के सबसे महत्वपूर्ण रूपांतरकारी कदम हैं। हमने समझा

है कि एक नियंत्रणकारी प्रशासन संवेदनशील प्रशासन नहीं हो सकता। हमने समझा कि राजनीतिक प्राधिकार से रहित एक तृणमूल प्रशासन वैसा ही है जैसे बिना नमक के भोजन। हमने जाना है कि जिले की दफ्तरशाही में कितनी भी सदाशयता क्यों न हो, निर्वाचित व्यक्तियों की प्रभावी देखरेख के बिना जनता और दफ्तरशाही के बीच की खाई को पाटा नहीं जा सकता। हमने जाना कि स्थानीय स्तर पर राजनीतिक प्राधिकार के अभाव में हर जगह सत्ता के दलाल पैदा हो गए हैं, जो जनसाधारण एवं दूरस्थ विधानसभाओं और उससे भी दूर संसद में बैठे उनके प्रतिनिधियों के बीच की खाई का अनुचित लाभ उठाते हैं। हमने समझा कि पंचायतों को अधिक शक्ति–संपन्न बनाने और उन्हें जनता के प्रति उत्तरदायी बनाने से ही भ्रष्टाचार को समाप्त किया जा सकता है। हमने पाया कि अपने विकास की जिम्मेदारी स्वयं तृणमूल स्तर के लोगों को देकर ही अक्षमता को समाप्त किया जा सकता है। हमने जाना कि सेवा–प्रदाताओं की असंवेदनशीलता को, लोगों को इतना अधिकार–संपन्न बनाकर समाप्त किया जा सकता है कि वे स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं में अपने प्रतिनिधि भेज सकें और उन लोगों को अस्वीकार कर सकें जिन्होंने जनादेश का सम्मान नहीं किया है।

पंचायती राज और नगरपालिका विधेयक ने केवल प्रजातंत्र और सशक्तीकरण को हर चौपाल, हर चबूतरे, हर आंगन और हर दालान तक ले जाने के औजार हैं, बल्कि वे अफसरशाही के दम, टेक्नोक्रेसी के आंतक, भारी अक्षमता, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद और लाखों अन्य बुराइयों, जिन्होंने हमारे गाँवों, कस्बों और शहरों में रहनेवाले गरीबों का जीना दूभर कर रखा है, को समाप्त करने का एक घोषणा–पत्र भी है। ये विधेयक सत्ता के दलालों, मध्यस्थों – जिन्हें शेक्सपियर ने 'राष्ट्र को खा जाने वाली इल्लियां' बताया था – की सत्ता को समाप्त करने के वारंट हैं।

ये विधेयक देश की शासन व्यवस्था की भारी कमियों को दूर करते हैं। वे उस प्रक्रिया की उपज हैं, जो हमारी महान चुनावी विजय के साथ शुरू हुई थी और जिसे सावधानी के साथ सुविचारित चरणों में इस हद तक विकसित किया गया है कि आज ये विधेयक हमारी महान संसद के सदनों के सामने विचारार्थ प्रस्तुत किए गए हैं। सामयिकता की दृष्टि से इन विधेयकों में अचानक या विस्मयकारी ढ़ग से कुछ नहीं हुआ है।

एक और बात है, जिस पर मैं जोर देना चाहूंगा। चुनाव आते हैं और जाते हैं। इन संविधान संशोधनों के परिणाम आनेवाले आम चुनाव के परिणामों से कहीं दूर तक जाएंगे। ये संशोधन सरकारों, चाहे वे केंद्र की हों या राज्यों की, चाहे वे काग्रेंस के नेतृववाली हों या किसी विपक्षी दल के लिए पवित्र दायित्व बन जाएंगे। हमारे प्रयोजनों में किसी प्रकार की चालाकी नहीं है। हम प्रजातंत्र को जमीनी स्तर पर एक विधिवत और अनिवार्य संवैधानिक दायित्व बना रहे हैं। इसी तरह हम स्थानीय निकायों तक प्रशासकीय और वित्तीय शक्तियों

के हस्तांतरण को वर्तमान व भविष्य की सभी सरकारों का, यहां केंद्र में या वहां राज्यों में, एक अनिवार्य दायित्व बना रहे हैं – एक ऐसा दायित्व, जो कांग्रेस–नीत सराकारों का भी उतना ही होगा जितना विपक्ष के नेतृववाली सरकारों का। एक चुनावी करतब पेशे की मांग होती है। जबकि संविधान संशोधन एक विधिवत, दीर्घकालीन वचनबद्धता है और हमारी वचनबद्धता जनता के प्रति है। जो लोग जनता को निराश करते हैं, वे अपने लिए ही संकट खड़ा करते हैं। जब एक मतदाता मतदान बूथ में अकेला होता है तो उसका हाथ उसी हाथ पर मुहर लगाएगा जिसने उसका हाथ मित्रवत पकड़ा था।

महोदया, आपकी अनुमति से अब मैं उन ब्योरेवार विषय पर कुछ कहना चाहूंगा, जो इस बहस के दौरान सहभागियों द्वारा उठाए गए हैं।

यह आरोप लगाया गया है कि दो अनुसूचियां, ग्याहर और बारह किसी रूप में राज्य विध ाानमंडलों की विधायी स्वायत्तता तथा उन उत्तरदायित्वों के संबंध में राज्य सरकारों द्वारा कार्रवाई करने की स्वतंत्रता का हनन करती हैं, जो उन्हें संविधान द्वारा सौंपी गई हैं। ऐसा मालूम होता है कि अनुसूची सात में दी गई विधायी व्यवस्था को प्रस्तावित अनुसूचियां ग्यारह और बारह में दी गई सूचियाँ समझ लेने से यह भ्रम पैदा हुआ है। अनुसूचि सात में दी गई संघ, राज्य और समवर्ती सूचियां संघ, राज्यों तथा संघ व राज्य दोनों की अपनी–अपनी विध ाायी क्षमता से संबंधित हैं। जबकि ग्यारह और बारह अनुसूचियों में उन विषयों की सूची उदाहरण के तौर पर दी गई है, जिनसे संबंधित विकास कार्यक्रम क्रमशः पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा कार्यान्वित किए जा सकते हैं। ये वे विषय हैं, जिनके बारे में स्थानीय स्तर पर लोगों की समझ राज्य की सुदूर राजधानी में बैठे शासक वर्ग की तुलना में अधिक गहरी होने की संभावना है और स्थानीय निर्वाचित निकायों द्वारा जिनका कार्यान्वयन सरकारी एजेंसियों के निष्ठुर प्रशासन के मुकाबले जनता द्वारा व्यक्त की गई आवश्यकताओं के प्रति अधिक सजग होगा।

अनुसूचियां ग्यारह और बारह स्थानीय निकायों को कोई विधायी शक्तियां प्रदान नहीं करतीं। राज्य विधानमंडलों की विधायी शक्तियों में से कुछ भी छीना नहीं गया है।

इन अनुसूचियां के जरिए केवल वह मार्ग बताया गया है, जिसपर चलकर पंचायतों और नगरपालिकाओं को स्थानीय स्व–शासन की जीवंत, गतिशील व सार्थक संस्थाएं बनाने के लिए प्रभावी हस्तांतरण की व्यवस्था की जा सकती है। सदन में रखे गए संविधान संशोधनों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि शक्तियों के हस्तांतरण के विधायी मानदंड निर्धारित करने का काम राज्य विधानमंडल का और उन मानदंडों को व्यवहार में लाने का दायितव राज्य सरकारों पर होगा। हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि हस्तांतरण का वास्तविक पैटर्न

अलग–अलग राज्यों में असमान हो सकता है। हम यह जनता के विवके पर छोड़ते हैं कि वह विभिन्न राज्य विधानमंडलों और राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों व नगरपालिकाओं के किए गए हस्तांतरण की मात्रा और प्रवृति को अपने वोट के जरिए स्वीकार करे या खारिज कर दे। वे राज्य सरकारें, जो जनता की अपेक्षाओं पर खरी उतरती हैं, उन्हें जनता का समर्थन मिलेगा। जो लोगों को निराश करेंगी, उन्हें वह अस्वीकार कर देगी। जनता का वोट ही हमारी राय है। राज्य सरकारों को जो एकमात्र भय हम दिखा रहे हैं – वह है जनता के द्वारा चुनावों में उन्हें अस्वीकार कर दिया जाना। उसी जनता के द्वारा जो स्वयं को उन अवसरों से वंचित अनुभव करती है, जो इन संविधान संशोधनों ने उन्हें दिए हैं।

यह आश्चर्य की बात है कि इस बहस में उस पहलू के बारे में बहुत कम कहा गया है, जो संशोधनों के मूल में है – अर्थात योजना बनाने और उनके कार्यान्वयन से संबंधित प्रावधान। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि हमारी योजनाएं जमीन से जुड़े हुए लोगों की समझ और आकांक्षाओं से बहुत दूर हो गई हैं। जिला स्तर पर जो योजनाएं बनाई जा रही हैं, वे औपचारिकता मात्र हैं। जनसाधारण से कभी सलाह नहीं ली जाती या ली भी जाती है तो सरकारी तौर पर। इन संशोधनों के जरिए योजना बनाने की प्राथमिक जिम्मेदारी हर स्तर की पंचायतों, नगरपालिकाओं की होगी। प्रत्येक स्थानीय समुदाय, चाहे वह ग्राम पंचायत के अंतर्गत एक छोटे से गांव में हो या नगर पंचायत के अंतर्गत आनेवाले कस्बे में हो या ऐसे कस्बे में हो, जो म्यूनिसिपल कौंसिल द्वारा शासित हो या एक ऐसे नगर में हो जो नगर निगम द्वारा शासित हो, अपने विकास हेतु अपनी योजनाएं स्वयं तैयार करेगा। मैं सदन का ध्यान विशेष रूप से तत्संबंधी प्रावधान की शब्दावली की ओर आकृष्ट करूंगा। इस प्रावधान के परिणामस्वरूप आर्थिक विकास की किसी भी योजना में सामाजिक न्याय का पहलू भी शामिल होगा। वैसे भी आरक्षण के लिए प्रावधान यह सुनिश्चित करता है कि योजना बनाने का कार्य करनेवाली पंचायत या नगरपालिका में कमजोर वर्गों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो। योजना तैयार करते समय सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूकता पैदा करने में वह अपने आप प्रभावी होगा। परंतु ये संवैधानिक प्रावधान इससे भी आगे जाते हैं। वे एक पंचायत या नगरपालिका द्वारा बनाई गई योजना की पूर्ति उस योजना में सामजिक न्याय के अवयव के समावेश पर आश्रित बना देते हैं। दूसरे शब्दों में, जहां अब तक (यहां तक कि गुजरात जैसे प्रगतिशील राज्य में भी जहां पंचायतों में सामाजिक न्याय समितियों का गठन सबसे पहले किया गया था) सामजिक न्याय, योजना की प्रक्रिया का अनुषंगी था ये संविधान संशोधन उसे योजना प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग बना देते हैं। अब पंचायतों, पंचायत समितियों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाएं, जिला परिषद् व नगरपालिकाओं के सदस्यों द्वारा चुनी गई समिति के द्वारा समन्वय और समेकन के लिए जिला परिषद् में भेज दी जाएंगी। जिला आयोजना के लिए बनी इस समिति में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों का जिले में उनकी आबादी के अनुपात में और 30 प्रतिशत आरक्षित

महिला सीटों का समावेश किया जाएगा। इस तरह जिला आयोजना समितियों का स्वरूप ही ऐसा होगा, जो जिला आयोजना में आर्थिक योजनाओं के साथ सामजिक न्याय को एकीकृत कर देता है। यही बात महानगरीय आयोजना के लिए गठित की जा रही निर्वाचित इकाइयों पर भी इसी तरह लागू होगी। ये संविधान संशोधन न केवल ॠणमूल स्तर के लोगों से विस्तृत चर्चा करने बल्कि सामाजिक न्याय की विकास की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बना देने के मामले में भी आयोजना के एक नए युग के आगमन का संदेश देते हैं। जहाँ तक कार्यान्वयन का प्रश्न है, विपक्ष के कुछ सदस्यों ने ग्यारहवीं और बारहवीं सनुसूचियों में इस या उस कमी को लेकर हौवा खड़ा करने का अधूरे मन से प्रयास किया है। इन तत्वों का कोई अर्थ तब होता, यदि हमारी ओर से इन अनुसूचियों को व्यापक या बाध्यकारी बनाने का कोई प्रयास किया गया होता। हम यह बात बहुत हद तक साफ कर चुके हैं कि ये दो अनुसूचियां स्वभावतः उदाहरणात्मक हैं और उनका उद्देश्य केवल ऐसा व्यवहारिक दिशा–निर्देश देना है, जिससे कार्यक्रमों और परियोजना का कार्यान्वयन अनुत्साही, दुर्लभ आधिकारिक एजेंसियों से करवाने के बजाय निर्वाचित स्थानीय निकायों को सौंपा जा सके।

कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए स्थानीय निकायों को जिम्मेदार बनाने से ही वे आम जनता के प्रति सचमुच उत्तरदायी बनेंगे। प्रतिनिधित्व के साथ जिम्मेदारी को जोड़ने से ही एक संवेदनशील प्रशासन का जन्म होता है। इसके अतिरिक्त, जिला आयोजना समितियों का जिला परिषदों में स्थित होना और एक तरह से उनके गठन मात्र से विकास संबंधी मुद्दों पर विचार करने के लिए पहली बार एक संयुक्त ग्रामीण – शहरी मंच तैयार हुआ है। इससे सामाजिक अन्याय से जुड़ी विभिन्न समस्याओं और उनके समाधान के उपायों के बारे अपने आप ही जागरूकता बढ़ेगी। प्रस्तावित महानगरीय आयोजना प्राधिकरण के जरिए भारत राज्यों और केंद्र के प्राधिकारियों तथा शहरी और आस–पास के ग्रामीण स्थानीय निकायों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच आदान–प्रदान के लिए एक मंच तैयार करने और इस तरह आर्थिक विकास की अनिवार्यता के साथ सामाजिक न्याय की आवश्यकता को जोड़नेवाले विश्व के अग्रणी विकासशील देशों में से एक बन जाएगा। हमने कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में स्थानीय निकायों के उत्तरदायित्व की एक निश्चित सीमा निर्धारित करने का काम राज्य विध ाानमंडलों और राज्य सरकारों पर छोड़ दिया है। कुछ राज्य दूसरे राज्यों से आगे निकल जाएंगे। शक्तियों और धन के हस्तांतरण की मात्रा और पैटर्न में कुछ भिन्नताएं उचित व स्वीकार्य होंगी; पंरतु कोई भी राज्य सरकार, जो इन संशोधनों की भावना का अतिक्रमण करती है उसे जनता के कोप का सामना करना होगा। केंद्र में हमने स्थानीय निकायों द्वारा अपने कार्यक्रम स्वयं कार्यान्वित करने के लिए उन पर विश्वास करने की शुरूआत कर दी है। जवाहर रोजगार योजना और नेहरू रोजगार योजना हमारी उस प्रतिबद्धता की गंभीरता को दर्शाते हैं, जिसके अंतर्गत विकास कार्यों में प्रशासन की जिम्मेदारी ॠणमूल स्तर के लोगों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को सौंपी जानी है। लोगों को अब दफ्तरशाही के एक बंद दरवाजे

से दूसरे तथा एक उदासीन कर्मचारी से दूसरे तक और अधिक नहीं भटकना पड़ेगा। जिन सेवाओं को प्राप्त करने का लोगों का अधिकार है, उनके लिए अब उन्हें न तो कर्मचारियों की खुशामद करनी पड़ेगी और न ही उन्हें घूस देनी पड़ेगी। हम ऋणमूल स्तर के लोगों के उस दु:स्वप्न का अंत कर रहे हैं, जिसका वर्णन लेखक काफ्कास्क्वे नाइरमेयर ने किया है। उनकी समस्याएं अब उनके घर के दरवाजे पर हल की जाएंगी। सरकारी विभागों की जवाबदेही अब उन्हें अपने गांवों मे ही उपलब्ध होंगी। अब पंचायत और नगरपालिका अपनी जिम्मेदारियों से बच नहीं सकेंगे। फाइलों के निरंतर बढ़ते ढ़ेर और अलमारियों में ठूस–ठूस भरी फाइलों में सच छिपा नहीं रह सकेगा, बल्कि पंचायत घरों और गांवों के चुनावों में, टाउन हॉल और हर मोहल्ले में होनेवाले चुनावों में सच प्रकट होगा।

जहां तक पंचायतों और नगरपालिकाओं के कुशल वित्त प्रबंधन का प्रश्न है, हम इसे वित्त आयोगों को सौंपने का प्रस्ताव करते हैं, जिनपर इन संविधान संशोधनों में विचार किया गया है। यहां भी, सामने बैठे कुछ सदस्यों की टिप्पणियों से ऐसा मालूम होता है, जहां उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 280 के अधीन स्थापित वित्त आयोग और वर्तमान संशोधनों में प्रस्तावित वित्त आयोगों की समान विशिष्टताओं को नोट कर लिया है, इन दोनों के बीच के अंतर को वे ठीक से समझ नहीं पाए हैं। जहां अनुच्छेद 280 के अधीन स्थापित वित्त आयोग केंद्र और राज्यों के बीच संसाधनों के बंटवारे को यथार्थ रूप में प्रभावित करता है, इस संशोधन में वर्णित वित्त आयोग स्वयं को केवल उन सिद्धांतों तक सीमित रखेंगे, जिनके आधार पर राज्यों और स्थानीय निकायों के बीच संसाधनों का बंटवारा किया जा सकता है। वास्तविक आंवटन इस विषय पर बने राज्य के कानून व वित्त आयोग द्वारा बनाए गए सिद्धांतों के प्रकाश में राज्य सरकारों द्वारा किया जाएगा।

केंद्र में हम नगरपालिकाओं और पंचायतों की वित्त व्यवस्था की समीक्षा का कार्य हाथ में ले रहे हैं, ताकि उन उपायों का पता लगाया जा सके जिनसे स्थानीय स्वशासन के लिए वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता बढ़ाई जा सके। हमें आशा है कि हमारी पार्टी और विपक्षी दलों द्वारा चलाई जा रही दोनों प्रकार की राज्य सरकारें अपने ज्ञानवर्धन के लिए ऐसे ही अध ययन कराएंगी।

संविधान संशोधन में स्थानीय निकायों के लेखे तैयार करवाने और उनकी लेखा परीक्षा करने का उत्तरदायित्व नियंत्रक महालेखा एवं परीक्षक को सौंपा गया है। इन लेखों को तैयार करने और उनकी लेखा परीक्षा की विधि नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा स्वयं तय की जाएगी। ऐसा लगता है कि सामने बैठे सदस्य तुंरत इस नतीजे पर पहुंच गए हैं कि इसका अर्थ स्थानीय निकायों के लेखे तैयार करने और उनकी लेखा परीक्षा की वर्तमान व्यवस्था को समाप्त करना है। हमारे विचार से, जब तक स्वयं नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक उस संबंध

ा में कोई भिन्न निर्णय न लें, वर्तमान में चल रही राज्य सरकार की मशीनरी को धवस्त करने की कोई जरूरत नहीं होगी और न नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के कार्यालय में कर्मचारियों की संख्या अत्यधिक बढ़ाने की। महालेखा परीक्षक से जो कुछ करने के लिए कहा जा रहा है, वह है विभिन्न राज्यों में स्थानीय निकायों के लेख तैयार करना और उनकी लेख परीक्षा की वर्तमान पद्धति की जांच करना और ऐसी पद्धतियां निर्धारित करना जिससे लेखे तैयार करने तथा उनकी लेखा परीक्षा की प्रक्रिया को अधिक कठोर कर दुरूपयोग की संभावना कम करने से है। स्थानीय निकायों के लेखे तैयार करने और उनकी लेखा परीक्षा का कार्य नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक सीधे अपने हाथ में ले लें, ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की गई है। राज्यों के स्थानीय निधि लेखा परीक्षा संस्थाएं अपना कार्य पहले की तरह करती रहेंगी; परंतु नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के व्यापक मार्गदर्शन व निर्देशन में।

अब मैं चुनाव आयोग की भूमिका पर विपक्ष द्वारा उठाए जा रहे बवाल की बात करता हूं। यहां भी यह सोचना कि स्थानीय निकायों के चुनाव करवाने की वर्तमान व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया जाएगा, संविधान संशोधनों को पूरी तरह गलत समझने का ही नतीजा है। राज्य स्तर के अपने निर्वाचन अधिकारियों और कर्मचारियों के जरिए चुनाव आयोग ही ये चुनाव करवाएगा। इसके अतिरिक्त चूंकि ये चुनाव नियमित रूप से होंगे और मनमाने ढ़ंग से उनका निलंबन जारी रखने को गैर–कानूनी माना जाएगा, इसके लिए वर्तमान चुनाव व्यवस्था को और मजबूत बनाना जरूरी होगा। हम जो महत्वपूर्ण बदलाव करने जा रहे हैं, वह चुनाव व्यवस्था का केंद्रीकरण नहीं बल्कि स्थानीय निकायों के चुनाव को चुनाव आयोग के क्षेत्राधिकार में लाना है।

हाल के महीनों में चुनाव आयोग की जिम्मेदारिया बहुत अधिक बढ़ गई हैं। जन–प्रतिनिधित्व अधिनियम एवं अन्य कानूनों में किए गए परिवर्तनों से आयोग का कार्यभार और अधिक बढ़ गया है। पंचायती राज और नगरपालिका विधेयकों के प्रावधानों के फलस्वरूप निर्वाचन आयोग की जिम्मेदारिया और भी बढ़ जाएंगी।

अध्यक्ष महोदया, हम इन विधेयकों पर किसी प्रकार का टकराव नहीं चाहते। इन विधेयकों को तैयार करने में हमने सभी कांग्रेस–शासित और गैर–कांग्रेसी दलों द्वारा शासित राज्यों के अनुभवों को ध्यान में रखा है। हमने पश्चिम बंगाल एवं आंध्रप्रदेश जैसी विपक्षी सरकारों और कर्नाटक की पूर्व जनता दल सरकार का बार–बार और खुले दिल से आभार व्यक्त किया है, जिन्होंने हमारे देश में पंचायती राज को उन्नत बनाने में रचनात्मक योगदान दिया है। इसी तरह हम गुजरात और महाराष्ट्र के पुरोगामी साहसी कांग्रेसी नेताओं के भी ऋणी हैं, जिनका पंचायती राज के क्षेत्र में सबसे लंबा, अनवरत और बेदाग रिकॉर्ड रहा है। कुछ गैर–कांग्रेसी एवं कांग्रेसी राज्यों में पंचायती राज और नगरपालिकाओं के अपर्याप्त व

अप्रभावी प्रशासन को लेकर हमारे नकारात्मक अनुभव भी रहे हैं, जिन्हें हमने खुले दिल से और पूरी तरह स्वीकार किया है। इसमें कोई भेदभावपूर्ण राजनीति नहीं है। हमारी दिलचस्पी केवल राष्ट्रीय हित में है – विकास के हित में, गरीबों के हित में, कमजोर लोगों के हित में। हम यह स्वीकार करते हैं कि जो लक्ष्य हम प्राप्त करना चाहते हैं, वे ऐसे लक्ष्य हैं जिन्हें भूतकाल में भारतीय जनता पार्टी और उनके पूर्ववर्तियों से लेकर कम्युनिस्ट पार्टियों और उनके पूर्ववर्तियों तक कई विचाराधारा को माननेवाले दल अपना चुके हैं। इन विधेयकों को पारित करने के लिए मैं सदन में उपस्थित सभी दलों को हमारे साथ हाथ मिलाने के लिए आमंत्रित करता हूं।

ये विधेयक जनता के लिए हैं। ये विधेयक उनके कल्याण, उनके लाभ के लिए हैं। ये विधेयक जनता के हाथों में शक्ति देने के लिए हैं। ये विधेयक सत्ता के दलालों की सत्ता समाप्त करने के लिए हैं। ये विधेयक ऋणमूल स्तर के लोगों को उत्तरदायित्व सौंपने के लिए हैं। ये विधेयक प्रशासन को प्रतिनिधिक बनाने के लिए हैं। ये विधेयक विकास की योजनाएं बनाने, उनके कार्यान्वयन और सामाजिक न्याय में लोगों को सहभागी बनाने के लिए हैं। इन विधेयकों की रूपरेखा ऐसी बनाई गई है कि प्रजातंत्र को हमारी राज व्यवस्था की जड़ों तक ले जाया जा सके, जिससे हमारे राज्यों की राजधानियों और राष्ट्रीय राजधानी की प्रजातांत्रिक अधिसंरचना स्थिर, सुदृढ़ और सुआधारित बन सके। ये विधेयक महात्मा गांधी के सपनों को साकार करते हैं। ये विधेयक पं. जवाहर लाल नेहरू के सपनों को साकार करते हैं। ये विधेयक इंदिराजी के प्रयासों का परिणाम हैं। महोदय, इन विधेयकों को निर्विरोध पारित करने के लिए मैं सदन का आह्वान करता हूं। जो इन विधेयकों का विरोध करेंगे वे जनता को निराश करेंगे और अपनी गलती पर बाद में पछताएंगे।

महोदया, मैं संविधान (64वां संशोधन) विधेयक, 1989 और संविधान (65वां संशोधन) विधेयक, 1989 सदन को सौंपता हूं।

''लोकतांत्रिक सिद्धांत का अर्थ यह है कि राजनैतिक सत्ता समाज में किसी एक व्यक्ति के पास नहीं होती है, यह सत्य विचार – विमर्शों एवं उत्तरोतर निर्वाचनों की प्रक्रियाओं के माध्यम से ही धीरे – धीरे मूर्त रुप लेता है।''

– प्रख्यात इतिहासकार अब्दल्लाह लारोई

भगवद्गीता में लोकसंग्रह का अर्थ एवं वर्तमान युग में उसकी उपयोगिता

– पुष्पा तिवारी

समस्याओं का दूसरा नाम हीं संसार है और इनसे निजात पाने की कोशिश में हर व्यक्ति जन्म से ही संघर्षरत हो जाता है। व्यक्तिगत स्तर पर हो या समाज के स्तर पर, इस संघर्ष के संचालन की क्षमता या जिजीविषा व्यक्ति अथवा समाज में निहित सामाजिक सक्रियता मूलक तत्व से मिलती है। लेकिन किसी व्यक्ति अथवा समाज में सामाजिक सक्रियता होगी या नहीं होगी, और यदि होगी तो उसका स्तर क्या होगा यह उस व्यक्ति अथवा समाज में अन्तर्निहित 'लोक संग्रह की वृति' पर निर्भर है जो कि सामाजिक सक्रियता ही नहीं भारतीय परम्परा के अनुसार उत्कष्ठ जीवन प्रबंधन का भी आधारभूत तत्व है।

काल गणना की भारतीय परम्परा के अनुसार मौजूदा समय कलियुग का है और परिभाषित प्रवृतियों के अनुरुप ही इस युग के अधिकांश लोग धन–दौलत, पद और प्रतिष्ठा के आकर्षण में बँधे हुए दिखते हैं। उन्हें अपने जीवन में शांति की तलाश तो है पर वह उन्हें शायद ही मिल पाती है। ऐसे समय में भटकते हुए मनुष्य के लिए भगवद्गीता एक निश्चित पड़ाव हो सकता है। यद्यपि सामान्य रुप से इसकी गिनती एक धर्म ग्रंथ के रुप में होती है पर इसकी उपयोगिता किसी धर्म, जाति या भौगोलिक सीमा की परिधि में सीमित नहीं है। यह ग्रंथ अपने अध्ययनकर्ता के मानस ग्रंथियों को खोलते हुए समस्त सांसारिक बंधनों और अपेक्षाओं की वास्तविकता तथा निस्सारता को उजागर करता है। जिसके कारण व्यक्ति शनैः शनैः जीवन के समस्त बंधनों से मुक्त होने की कोशिश करता हुआ अनंत स्वतंत्रता की ओर बढ़ता चला जाता है।

सर्व शक्तिमान ईश्वर से एकाकार होने के इस सफर में व्यक्ति को अमोघ मानसिक शीतलता और शांति की प्राप्ति होती है। इस दौरान कर्म के रुप में गीता व्यक्ति से उस उदार ह्दय तथा परोपकारी भावना की अपेक्षा करती है जिसके तहत व्यक्ति अपने मौजूदा सामर्थ्य के अनुसार निष्काम कर्म करते हुए समस्त सृष्टि का हित साधन करेगा। इस दृष्टि, भावना और मानसिकता को ही गीता में 'लोकसंग्रह' के रुप में दर्शाया गया है। कहते हैं कि लोकसंग्रह के लिए ही भगवान कृष्ण ने मनुष्य अवतार लिया था। दुनियां के अनेक विद्वानों एवं आध्यात्मिक दार्शनिकों का मानना है कि कोई भी मनुष्य भगवद्गीता के सिद्धान्तों को अपने जीवन में अपनाकर राजा जनक की भांति गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी शांति और

अंततः मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है जो भारतीय परंपरा के अनुसार जीवन का परम लक्ष्य भी माना जाता है।

भगवद्गीता मूलतः महाभारत के अठारहवें अध्याय में वर्णित भीष्मपर्व का एक अंश है जिसमें कुल 700 ष्लोकों का समावेश किया गया है। भारतीय मान्यता के अनुसार ये सभी श्लोक भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा अपने परमशिष्य और सखा अर्जुन को संबोधित करते हुए कहे गए हैं। भगवान श्रीकृष्ण इन लोकों के माध्यम से अर्जुन और उसके माध्यम से सम्पूर्ण मानवता को यह बताने का प्रयास करते हैं कि मनुष्य को इस संसार में अपना कर्तव्यपालन किस तरह करना चाहिए। यहां भगवान कृष्ण ने अत्यन्त सहज व सरल रूप में यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि कर्म प्रबंधन का वह कौन सा सर्वश्रेष्ठ और संतुलित मार्ग है जिसके तहत मानवीय रिते, संवेदनाएं तथा जीवन में प्रतिपल घटित होने वाली क्रियाएं व्यवस्थित तथा परिपूर्ण हो सकती हैं।

ज्ञात है कि अमेरिका की सेंट्रल हॉल यूनिवर्सिटी ने विश्वविद्यालय में भारतीयों की संख्या अत्यन्त कम होने के बाद भी भगवद्गीता को अपने नित्य पाठ्यक्रम में शामिल किया है। इसका कारण है कि आज के युग में अत्यधिक धनसम्पदा होते हुए भी मनुष्य को शान्ति नहीं मिल रही है। वह परिश्रम तो कर रहा है पर उसके मन को शान्ति नहीं मिल रही है। संभवतः विश्वविद्यालय के अकादमिक अधिकारियों को इसका आभास होगा कि श्रीमद् भगवद्गीता ही वह रसायन परोस सकता है जो जीवन में रहते हुए भी आपको शान्ति व तृप्ति का मार्ग बताती है।

लोकसंग्रह – अर्थ व महत्व

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसङग्रहमेवापि सम्पष्यन्कर्तुमर्हसि।।

श्रीमद् भगवद्गीता का उददेश्य व्यक्ति को सांसारिक बंधनों और चाहतों से विमुख कर सत् के सम्मुख कर देना है क्योंकि सत् के सम्मुख होने से मनुष्य का स्वयं ही उद्धार हो जाता है। श्रीमद् भगवद्गीता के तीसरे अध्याय के उपरोक्त 20 वें श्लोक में उल्लेखित शब्द 'लोकसंग्रह' में लोक शब्द तीनों लोकों अर्थात भूलोक, मृत्युलोक व स्वर्गलोक के लिए प्रयुक्त हुआ है तथा संग्रह का तात्पर्य एकत्र करने से है। इस प्रकार 'लोकसंग्रह' का तात्पर्य लोगों को इस तरह एकत्रित करने से है जहां उनमें स्वयं को संयमित एवं नियमन करने वाली एकता आ जाए। वस्तुतः यह सभी के हित साधन हेतु कर्म करने की ओर इंगित करता है।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कताम्।

धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

जैसा कि श्रीमद् भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के उपरोक्त 8 वें श्लोक में वर्णित है स्वयं श्रीकृष्ण भी इसी प्रकार के कार्य का प्रदर्शन करते हैं। भगवान के लिये कोई कर्तव्य निर्धारित न होने पर भी वे मात्र दूसरों के हित साधन के लिए अवतार लेते हैं और साधु पुरुषों का उद्धार, पापी पुरुषों का विनाश तथा धर्म की संस्थापना के लिए ही कर्म करते हैं।

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत।।

श्रीमद् भगवद्गीता के चौथे अध्याय के उपरोक्त पहले श्लोक के अनुसार कहते हैं कि भगवान कृष्ण ने यह उपदेश सर्वप्रथम सूर्य को दिया था जिसे आगे चलकर सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्वत मनु को दिया। मनु ने इसे रघूकुल के महान शासक इक्ष्वाकु को प्रदान किया और इस तरह अनादि काल से अब तक 'लोकसंग्रहार्थ' परमार्थ का क्रम चलता आ रहा है।

यदि व्यक्ति अपने जीवन की ओर गौर से देखे तो ज्ञात होता है कि उसपर न जाने कितनों का कर्ज सदैव ही बना रहता है। हम जिस मकान में रहते है वह किसी के द्वारा बनाया गया है, जिस सड़क पर चलते हैं वह किसी और के द्वारा बनाई गई है। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य का दूसरे मनुष्य पर ऋण है। भारतीय मान्यता के अनुसार हर व्यक्ति पर तीन प्रकार के ऋणों क्रमशः पितष्ऋण, मातृष्ऋण और ऋषिऋण की कल्पना की गई है और कहा गया है कि इन ऋणों से हम तभी मुक्त हो सकते हैं जब हम प्रतिपल लोकसंग्रहार्थ कार्य करें जैसा करते हुए स्वयं राजा जनक ने परमसिद्धि प्राप्त की थी।

संदर्भ

1. श्रीमद भगवद् गीता – स्वामी राम सुख दास।
2. गीता रहस्य – तिलक, केसरी मुद्रणालय, पूना (1911)।
3. गीता तत्व चिन्तन – स्वामी आत्मानन्द।
4. महाभारत – आश्वमेधिक।
5. शंकर गीता भाष्य, योगाश्रय आवृत्ति, बनारस (1919)।
6. गीता ज्ञान – व्याख्यान वाचस्पति श्री पं. दीनानाथ भार्गव 'दिनेश'।
7. गीता निबन्धावली – जय दयाल गोयन्दका।
8. दैनिक भास्कर, आदित्याज, राज एक्सप्रेस।

लाचारी

बुधवार, यानी हाट–बाजार का दिन। गांव के बाजार में अक्सर 4 बजे के बाद ही चहल – पहल देखने को मिलती है। मेरे घर में एक गाय थी, उसकी देख – रेख और चारा – पानी की जवाबदेही मुझ पर ही थी। इसलिए हफ़्तेभर के पशुचारा की ख़रीदारी करने मैं बाजार के लिए शाम 4 बजे के बाद ही निकलता था।

मेरे घर से कुछ दूरी पर पुजारी काका का घर पड़ता है। मैंने देखा कि आज वे घर के बाहर ही बैठे थे।

'जय रामजी की।' राम–राम बेटा राम–राम। कहां जा रहे हो? काका जी ने मुझसे पूछा।

'बाजार जा रहा हूं काका जी! गाय के लिए चारा – भूसा , ख़रीदने।' मैंने जवाब दिया।

'अरे अभी कहां ढंग से बाजार लगी होय? आ बैठ ले थोड़ी देर। फिर मैं भी चलूंगा तेरे साथ चारा ख़रीदने।' इतना कहते हुए पुजारी काका ने पास रखी एक खाली कुर्सी को मेरी तरफ सरका दिया।

हर बाजार काका जी भी अपनी दो गायों के लिए चारा – भूसा ख़रीदने जाते ही हैं, अतः ख़रीदारी में उनकी बुजुर्गी का फ़ायदा उठा लेने में क्या बुराई है, यह सोचकर मैं कुर्सी पर बैठ गया। मेरे कुर्सी पर बैठते ही पुजारी काका ने अपनी सफ़ेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए मुझसे कहा, 'क्या है बेटाकृकृ अभी तेज धूप हैकृ कृ जरा ई धूप ठंडी हो जाने देकृकृ फिर चलते है न अपन बाजारकृकृ'

'तब तक सारा चारा – भूसा बिक गया तो ? मैंने आशंका जताते हुए पूछा।

'ऐसे नहीं बिकता ऐसे – कैसे बिक जाएगा इतनी जल्दी ? बहुत आया है आज बाजार में चारा–भूसा। जल्दी का काम शैतान का होता है कि नाही, बताकृकृ?' मैंने काका जी के इस प्रश्न का जवाब सिर हिलाकर 'हां' में दिया। उन्होंने फिर मुझे समझाते हुए आगे कहा, 'असल में बात यह है बेटा कि अगर हम अभी चलते हैं तो चारा बेचने वाले पहाडी़ लोग, चारा – भूसा के अनाप–शनाप दाम बताएंगे। सूरज डूबने के बाद जब थोड़ा – थोड़ा अंधेरा होने लगेगा, तो उनको घर लौटने की हड़बड़ी रहेगी। ऐसे में हम चारे के गट्ठे के जितने दाम कहेंगे, थोड़ी ना – नुकर के बाद वे उतने ही दाम में बेचने के लिए मजबूर हो जाएंगे। बात ये है और कुछ नाहीं समझे!'

'परंतु काका यह तो उनकी लाचारी का सौदा होगा न?' मैंने संदेह जताते हुए पूछा। काका मेरे इस प्रश्न का जवाब देते इससे पहले ही काकी जी पानी का गिलास लेकर मेरे सामने आ गई और बोलीं, 'बेटा, अपने से बड़ों का कहना मान लेने में ही भलाई है।' मैं मन ही मन सोचने लगा कि गुरू अब चुपचाप बैठे रहने में ही अक्लमंदी है। मैंने उनकी बात मान ली और वहीं बैठा रहा।

शाम ढली, तो हम दोनों बाजार के लिए निकल पड़े। वहां पहुंचने पर एक चारा बेचने वाले के

साथ काका जी मोल – भाव करने में उलझ गए। मैं उन्हें वहीं छोड़कर आगे बढ़ गया। थोड़ा आगे पहुंचने पर मैंने देखा कि एक चारा बेचने वाली महिला दो चारे के गट्ठों के पास बैठकर अपनी 6 – 7 साल की

लड़की को प्याज के साथ रूखी रोटी खिला रही थी। पास ही एक प्लास्टिक की बोतल में पानी रखा था। बेटी के गले में रोटी का कौर न फंस जाए, इसलिए वह बीच – बीच में उसे पानी भी पिलाती जा रही थी।

उसने जैसे ही मुझे अपनी ओर आते देखा, उसी क्षण अपने हाथ में रखी रोटी को गमछे में लपेटा और खड़ी होते हुए मुझसे बोली, 'चारा ले लो भैया जी।' उसकी बोली में अपनापन तो था पर उससे कहीं अधिक ग़रीबी की लाचारी थी। मैंने सामने रखे दोनों गट्ठों की ओर इशारा कर पूछा, 'चारे के ये गट्ठे कितने – कितने के हैं?'

'ले जा ल्यो भैया जी, सस्ते ही हैंकृकृ चालीस – चालीस रुपये दे देना'

इतने इतने से गट्ठे और चालीस – चालीस रुपये! कहते हुए मैं आगे बढ़ने लगा। आया ग्राहक कहीं हाथ से न निकल जाए, इसी डर से वह दौड़ते हुए और मुझे रोकते हुए बोलीं, भैया जी, आप भी तो कुछ बोलो नकृकृकृ अच्छा आप ही बताओं इसके कितने रुपये दोगे ? उसकी आखों में घर लौटने की उतावली तथा बोली में मिठास से मेरा मन पसीजने लगा था। फिर भी मैंने अपने मन को कड़वेपन की चादर ओढ़ाते हुए कहा, बीस – बीस रुपये में देना हो, तो बताकृकृनहीं तो फिर तेरी मर्जी।

अपने गट्ठों की इतनी कम कीमत सुनकर उसकी आंखे फटी की फटी रह गई । गरीबी के साए में लिपटी उस महिला के शरीर ने थोड़ी देर के लिए हरकत करना बंद कर दिया । मन में निराशा के लिए वह उदास मन से बोली, भैया जी इतने कम पैसे में ये बाल बच्चन के लिए मेरे हफ्तेभर का बाजार आ जाहे का?

जैसे ही मेरी नजर उसके पास खड़ी उसकी बेटी के चेहरे पर पड़ी उसी समय मेरे मन की कठोरता पानी – पानी हो गई। वह अपनी मां की साड़ी का छोर पकडकर मुझे एकटक निहारे जा रही थी। मुझे लगा, मानो मुझसे कह रही हो, बाबूजी ! जिस विद्याता ने हमारी तकदीर में लाचारी लिखी है, क्या उसी ने तुम्हें इस लाचारी का सौदागार बनाकर हमारे पास भेजा है। नहीं कृनही कृकृकृ कहते हुए मैने अपना सिर झटक लिया।

वह महिला चौंक गई और मुझसे पूछने लगी, क्या हुआ भैया जी ? कुछ नहीं मैंने जबाब दिया। मेरा उत्तर सुनकर वह चुप हो गई। कुछ पलों बाद फिर कहने लगी , भैया जी , ज्यादा सोच – विचार मत करो, ले जा ल्यो बीस – बीस रुपये में ही ये गट्ठे। चिल्लर देना। मेरे पास पैसे नहीं हैं। मैने अपनी जेब से सौ रुपय का नोट निकाला और उसकी और बढ़ाते हुए कहा, बाई मेरी जेब में इससे छोटा नोट नहीं है तू ऐसा कर, बाकी बचे साठ रुपये मुझे अगली बार लौटा देना .'कृकृठीक है?

नहीं – नहीं ! ये का कह रहे हो तुमकृकृकृ मैं आने वाले हफ्ते के बाजार में तुम्हें कहां ढूंढते रहूंगी! ठहरो में किसी से साठ रुपये मांकर तुम्हें लौटाती हूं। उसकी इस प्रकार की हड़बड़ाहट और बेचैनी देखकर मैंने उसे मन ही मन प्रणाम किया। धन्य है यह नारी जो सिर से पैर तक गरीबी के दलदल में डूबी है, लेकिन उसके मन में अब तक सच्चाई और ईमानदारी कायम है।

वह नोट तुड़वा लाई थी लेकिन मैं निर्णय ले चुका था कि बाकी के साठ रुपये मैं वापस लूंगा ही नहीं। मैंने उससे कहा , अचछा मान ले कि तेरे इन गट्ठो को मैंने पचास पचास रुपये में खरीदा है।

ऐसे नहीं भैया जी। जितने में सौदा हुआ है, मैं आपसे उतने ही रुपये लूंगी । वह मानने को तैयार ही नहीं थी।

अच्छा तू मुझे बार – बार भैया जी , भैया जी बोल रही है, इस नाते तेरी बेटी मेरी भांजी हुई कि नहीं! मैं अपनी भांजी को मिठाई खाने के लिए तुझे साठ रुपये दे रहा हूं, ऐसा मान ले । देख इतनी बडी मेरी भी एक बेटी है , उसमें और तेरी इस बेटी में अंतर ही क्या है कृकृ बता ?

बहुत अंतर है भैया जी ! आप बडे लोग हो, आपने घर में जन्मी बेटी भी तो भाग्यवान होगी। गरीब घर में जन्मी और रुखी – सूखी रोटी खाने वाली मेरी बेटी कहां आपकी बेटी की बराबरी करेगी? भगवान आपकी बेटी को महलों की रानी बनाएं। इतना कहते हुए उसने नीचे पड़े अपने गमछे तथा भुटटे की छूंछ के ढक्कन वाली तेल की शीशी को एक थेले में भरा और अपनी बेटी को गोद में उठाकर चली गई। मैं उसे जाते देखता रहा।

थोड़ी देर के बाद वह बाजार की भीड़ में न जाने कहां गुम हो गई और मैं वहीं खड़ा रह गया।

(साभार – दैनिक भास्कर)

Form IV

1. Place of Publication	Indian Adult Education Association 17 – B , Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
2. Periodicity of Publication	Quarterly
3. Printer's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17– B , Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
4. Publisher's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17– B , Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
5. Editor's name Nationality Address	Dr. Madan Singh Indian 17– B , Indraprastha Estate New Delhi – 110 002
6. Name and address of individuals who own the newspaper and partners or shareholders, holding more than one percent of the total capital	Indian Adult Education Association 17 – B , Indraprastha Estate New Delhi – 110 002

I, Dr. Madan Singh, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my Knowledge and belief.

Dated: 14.3.2016

Sd/-
Dr. Madan Singh
Signature of Publisher

हमारे लेखक

दीपेश भट्ट
सहायक आचार्य
लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण
महाविद्यालय
डबोक
उदयपुर, राजस्थान

एस.एस. रावत
आचार्य / विभागाध्यक्ष
प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग
हे.न.ब.ग.वि.वि. श्रीनगर (गढ़वाल)

अलका पाण्डेय
शोध छात्रा
प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग
हे.न.ब.ग.वि.वि. श्रीनगर (गढ़वाल)

पुष्पा तिवारी
असिस्टैन्ट प्रोफेसर
इन्स्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज
शिवपुरी लिंक रोड़
ग्वालियर (म.प्र.)

रेनू गौतम
प्रवक्ता–गृह विज्ञान
बिड़ला परिसर हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय
श्रीनगर गढ़वाल
उत्तराखण्ड